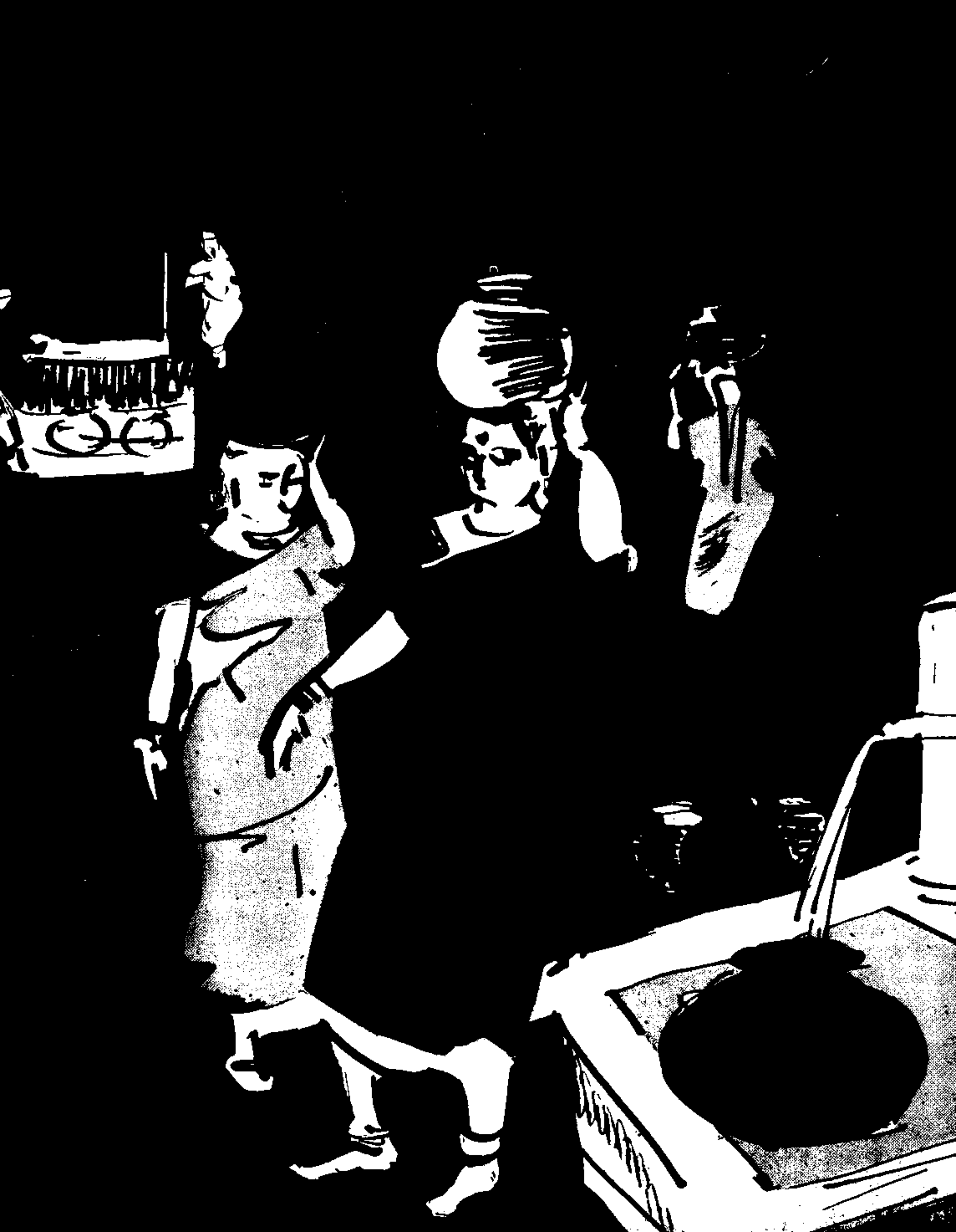

संपादकीय

सफाई, स्वास्थ्य और पेयजल

हवा, पानी और अनाज जीवन की मूलभूत आवश्यकताएं हैं। अनाज के बिना आदमी कुछ दिनों तक जिन्दा रह सकता है परन्तु हवा-पानी के बिना अधिक समय तक जिन्दा रहना सम्भव नहीं। खेद है कि औद्योगिक विकास के कारण दुनिया का पर्यावरण भी दूषित होता जा रहा है और शुद्ध पीने योग्य पानी तो विकासशील देशों की आधी से अधिक आबादी को सुलभ नहीं। इन देशों के तीन चौथाई लोग सफाई और स्वास्थ्य की सुविधाओं से वंचित हैं। जहां तक शुद्ध पेयजल की पूर्ति का संबंध है, इस समस्या को सुलझाने के लिए अब संयुक्त राष्ट्र आगे आया है और उसने अपने प्रयास शुरु कर दिए हैं। इरादा है कि 1990 तक तीसरे विश्व के सभी देशों के लिए शुद्ध पानी की पूर्ति और सफाई सुविधाएं उपलब्ध की जा सकेंगी।

पानी को हमारे वेद-शास्त्रों में अमृत कहा गया है। वास्तव में खनिज तत्वों से पूर्ण शुद्ध जल अनेक रोगों को नष्ट करता है और स्वास्थ्य के लिए बड़ा जरूरी है। परन्तु वही जल यदि विषाक्त तत्वों से पूर्ण हो तो अनेक रोगों को जन्म देता है। तीसरे विश्व के देशों में दूषित जल के पीने से लाखों करोड़ों लोग मृत्यु के कराल गाल में चले जाते हैं। आंकड़ों के अनुसार इन देशों में 30 हजार व्यक्ति प्रतिदिन अशुद्ध जल पीने से मौत का शिकार होते हैं और 60 लाख बच्चे प्रतिवर्ष पेचिस के रोग से पीड़ित होकर मर जाते हैं। इसी तरह और भी अनेक रोग अशुद्ध जल पीने से पैदा होते हैं। यदि इन देशों को शुद्ध जल की पूर्ति उपलब्ध हो जाए तो पेट के हैजा और पेचिस आदि रोगों का कम से कम 50 प्रतिशत उन्मूलन किया जा सकता है।

शुद्ध जल की पूर्ति के अभाव में किसी व्यक्ति, परिवार और देश का आर्थिक जीवन भी अस्त-व्यस्त होता है। शुद्ध जल का स्वास्थ्य पर तो अच्छा प्रभाव पड़ता ही है जबकि स्वस्थ व्यक्ति अपने समय को आर्थिक विकास या उत्पादन के काम में लगा सकता है। यह भी देखा गया है कि जहां जलपूर्ति की व्यवस्था सुचारु रूप से चालू कर दी गई है वहां के लोग आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हुए हैं।

यद्यपि पूरे तीसरे विश्व के सभी विकासशील देशों को जल की पूर्ति उपलब्ध करने के लिए बड़ी धन राशि की आवश्यकता है, परन्तु संयुक्त राष्ट्र बाल कोष के पेय जल कार्यक्रम से संबंधित वरिष्ठ सलाहकार डा० मार्टिन वेबर का कहना है कि 1990 तक शुद्ध जल पूर्ति के कार्यक्रम के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए धन की उपलब्धि इतनी कठिन नहीं है और न मशीनी साधन-सुविधाओं की इतनी अधिक बाधा है, मुख्य रूप से बाधा है तो प्रबंध व्यवस्था की। मिसाल के तौर पर, हमारे ही देश में बहुत सी जगह शुद्ध पेय जल की पूर्ति उपलब्ध करने के लिए हैण्ड-पम्प लगाए गए। परन्तु जब उनकी देख-भाल की व्यवस्था नहीं की गई तो वे खराब हो गए। अतः पेय जल पूर्ति के लिए जो मशीनें काम में लाई जाएं उनकी देख-भाल और सार सम्भाल के लिए प्रशिक्षित कर्मचारियों और प्रबंधकर्त्ताओं की व्यवस्था बड़ी जरूरी है।

तीसरे विश्व के विकासशील देशों में जल पूर्ति के दस वर्षीय लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए संयुक्त राष्ट्र की अनेक एजेंसियां कार्यशील हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूनीसेफ आदि के कार्य में भी समन्वय कायम है। यूनीसेफ के बजट का एक तिहाई भाग इस वर्ष जल पूर्ति और सफाई पर ही खर्च होने जा रहा है। विश्व बैंक भी 1983 तक 700 अमरीकी डालर खर्च करेगा। परन्तु इस दस वर्षीय कार्यक्रम की सफलता अधिकतर इस बात पर निर्भर होगी कि लोग इस कार्य में कितनी रुचि लेते हैं और इस में शामिल होकर इसके कार्यान्वयन में कितनी सहायता देते हैं।

जहां तक हमारे अपने देश में शुद्ध पेयजल की पूर्ति का संबंध है, सरकार प्रत्येक व्यक्ति को शुद्ध जल की पूर्ति उपलब्ध करने के लिए कृतसंकल्प है परन्तु कार्य बड़ा विशाल है। वैसे तो सारे देश में ही अनेकानेक ऐसे स्थल हैं जहां शुद्ध पेयजल की पूर्ति नहीं हो पा रही है। परन्तु राजस्थान तो हमारा एक ऐसा प्रदेश है जहां यह कथन सार्थक होता है 'सूखी धरती प्यासा इन्सान। इसी का नाम है राजस्थान'। राजस्थान के जैसलमेर आदि इलाकों में तो पानी अनमोल वस्तु है। तीन-तीन सौ, चार-चार सौ फुट की गहराई पर पानी मिलता है, कहीं-कहीं तो यह ऐसा विषैला होता है कि पीते ही घातक बीमारियां लग जाती हैं। वास्तव में मीठा पानी यहां मिल जाए तो वरदान है। पानी की तलाश में सुबह चार बजे ही औरतें घड़े सिर पर लिए घर से निकल पड़ती

[शेष पृष्ठ 3 पर]

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण पुनर्निर्माण मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

एक प्रति 1 रु० : वार्षिक चंदा 10 रु०

●

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह
उपसम्पादक : राधे लाल
आवरण पृष्ठ : परमार

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण पुनर्निर्माण का प्रमुख मासिक

वर्ष 26 आषाढ़–श्रावण 1903 अंक 9

इस अंक में : **पृष्ठ संख्या**

शहरों से गांवों की ओर 2
देवेन्द्र उपाध्याय
एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम का लेखा जोखा 4
डा० हेमचंद जैन
लोक संस्कृति और पेड़-पौधे 6
डा० कमलाकान्त हीरक
परिवार कल्याण कार्यक्रम 8
नरेन्द्र सिंह
विकलांगों/अपंगों के लिए समाज में समानता व पूर्ण भागीदारी 10
ब्रह्मप्रकाश गुप्त
ग्रामीणों के स्वास्थ्य सुधार की समस्या 11
विमला उपाध्याय
गेहूं का वसूली मूल्य: एक अध्ययन 13
आर० सी० भटनागर * टी० आर० सिंह
ग्रामीण विकास में आधुनिकतम प्रौद्योगिकी 15
प्रदीप चतुर्वेदी
छोटे किसानों की सेवा में राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण ब्यूरो 16
आर० बी० खांडेकर
ग्राम विद्युतीकरण क्षेत्र में एक नया प्रयोग : ग्राम विद्युत् सहकारी समितियाँ 17
रामसुन्दर शुक्ल
पशुओं की आकस्मिक मृत्यु 19
ऊषा बाला
खैरवाड़ा में जन-सहयोग 20
धर्मपाल चौधरी
जलकुम्भी : वरदान या अभिशाप 21
बालमुकन्द
राजस्थान का सांस्कृतिक पर्व: गणगौर 23
रामबिहारी विश्वकर्मा
हिन्दी की ताकत 25
के० के० राघवन
अढ़ाई कट्टे में अयाची मिश्र 26
मृदुला सिन्हा
आंगन के दीप (कहानी) 27
बनवारी लाल क़मर वैश्य

स्थायी स्तम्भ

कविता : साहित्य समीक्षा : केन्द्र के समाचार : इत्यादि।

शहरों से गांवों की ओर

देवेन्द्र उपाध्याय

देश में गांवों से शहरों को जाने का सवाल गंभीर चिंता का विषय बन गया है। रोजी-रोटी की तलाश में लोग भाग रहे हैं शहरों को। गांव खाली हो रहे हैं और शहर स्लम बनते जा रहे हैं। परम्परागत ग्रामोद्योगों और कला का ह्रास होता जा रहा है और वे अपना अस्तित्व खोते जा रहे हैं। कलाकारों और शिल्पियों के शहरों की ओर पलायन से ग्रामीण अर्थव्यवस्था चरमरा उठी है क्योंकि इसके मूल आधार ग्रामोद्योग खत्म होते जा रहे हैं।

भारतीय स्टेट बैंक ने राजस्थान में लोगों को गांव छोड़कर शहर भागने से रोकने और शहरों से वापस गांव लौटाने की एक योजना लागू की है। बैंक की कृषि विकास शाखा, रामगढ़ (अलवर) ने 'डोली का बास' नामक गांव में ग्रामीण औद्योगीकरण द्वारा शत प्रतिशत रोजगार का मानदण्ड स्थापित किया है। अब तक इस गांव के शिल्पी और उनकी कला गुमनामी के अंधेरे में डूबे हुए थे। अनगढ़ पत्थरों को सुन्दर मूर्तियों में बदलने वाले मूर्तिकार जयपुर के मूर्ति विक्रेताओं के नौकर बनकर रह गए थे। बैंक की रामगढ़ शाखा ने उनमें से कुछ मूर्तिकारों से संपर्क किया और उन्हें अपने ही गांव में वापस लाने का प्रयास किया। इनको जयपुर से वापस अपने गांवों में लाया गया ताकि दो-दो स्थानों का खर्च बचाकर वे अपने परिवारों के साथ रहकर अपने छोटे-छोटे खेतों की देखभाल करते हुए अपनी आय बढ़ा सकें।

'डोली का बास' गांव की विशेषता यह है कि इसमें रहने वाले सभी 35 शिल्पियों को 1.25 लाख रु० के ऋण दिए गए।

बैंक ने इस अनुभव से उत्साहित होकर बालेटा, थानागाजी तथा अन्य गांवों में भी समान अभियान चलाए हैं। जिन मूर्तिकारों को ऋण दिए गए हैं वे सीधे मकराना से ट्रक में संगमरमर का पत्थर लाते हैं, मूर्तियां तैयार करते हैं और जयपुर, बनारस तथा दिल्ली से आने वाले व्यापारियों को निश्चित मूल्य पर बेचते हैं।

बैंक की रामगढ़ शाखा ने अलवरा गांव के 20 बुनकरों को 25 हजार रु० ऋण देकर उन्हें महाजनों और व्यापारियों के चंगुल से मुक्त कराया है। ये बुनकर राजस्थान की परम्परागत पगड़ियां बनाते हैं। इन्हें करघा घर बनाने और बड़े लूम खरीदने के लिए आर्थिक सहायता देने के उद्देश्य से एक विशेष योजना बनाई जा रही है। पहले चरण में यह योजना रामगढ़ पंचायत समिति क्षेत्र में लागू की जा रही है। इकाई की कुल लागत 6500 रु० है और अनुदान को छोड़कर बैंक का अंश 5400 रु० होगा। पहले चरण में कुल ऋण 5400 रु० के होंगे।

रामगढ़ कृषि विकास शाखा 24 फरवरी, 1976 को खोली गई थी। पांच वर्ष के भीतर इसने 'डोली का बास' गांव को गोद लेकर और अलवरा के अनुसूचित जाति के 20 परिवारों (बुनकरों) को अपने साथ जोड़कर पूरे किए हैं।

2 अप्रैल, 1981 को दिल्ली और जयपुर के पत्रकारों के एक दल ने इन गांवों का दौरा किया और दोनों गांवों के शिल्पियों और बुनकरों की स्थिति को निकट से देखा। भारतीय स्टेट बैंक के क्षेत्रीय प्रबन्धक श्री रामनाथ गोसाईं तथा दूसरे अधिकारी भी पत्रकारों के साथ थे।

'डोली का बास' के शिल्पियों के चेहरों पर मुस्कान थी। छोटे-छोटे बच्चों से लेकर बुजुर्ग तक सबको सिर्फ एक ही नशा है खूबसूरत मूर्तियां बनाने का। इनमें से अधिकांश 8-10 वर्ष तक जयपुर में मूर्तिकारों के नौकर बन कर रह गए थे और मजदूरी पाते थे सिर्फ 500 रु० और 8-10 घंटे रोज काम। अब वे अपनी सुविधा से 5-6 घंटे औसत काम करके 5-6 सौ रु० कमा रहे हैं। अब वे नौकर नहीं मूर्तिकार हैं।

सुखराम, दरबारी लाल, चिरंजी लाल, और दूसरे मूर्तिकारों के चेहरों पर संतोष है। अब वे बैंक की मदद से मकराना से सीधे पत्थर स्वयं लाते हैं, मूर्तियां बनाते हैं और अपने गांव में आने वाले व्यापारियों को मूर्तियां बेच देते हैं। मूर्तियों की कीमतें फुट के हिसाब से व्यापारियों ने ही तय की हैं इसलिए उन्हें बहुत ज्यादा पैसा नहीं मिलता है। जबकि व्यापारी मूर्तियों को फिनिशिंग-टच देकर मनमाने दामों में बेचते हैं और खूब मुनाफा कमाते हैं।

अलवरा गांव के बुनकर पहले महाजनों के कर्ज के बोझ से दबे रहते थे। वे व्यापारियों से सूत उधार लाते थे और फिर पगड़ियां बनाकर उन्हीं व्यापारियों को बेचने के लिए मजबूर थे। साल में मुश्किल से 220 दिन का काम और

उस पर भी नाम मात्र की मजदूरी निकलती । बैंक से कर्ज मिलने के बाद वे अपनी इच्छा से सूत खरीदते हैं और अपनी इच्छा से पगड़ियां बेचते हैं । जिससे 5 से 8 रुपये रोज उनकी आय बढ़ी है । बैंक इन्हें दरियां व कंबल बुनने का प्रशिक्षण देने की योजना बना रहा है ताकि इन्हें साल भर काम मिल सके।

अलवरा गांव के इन भूमिहीन बुनकरों का रोजगार का एकमात्र साधन पगड़िया बनाना है । इसी गांव में करीब 125 मोची रहते हैं उन्हें भी बैंक ने ऋण दिया है ।

स्टेट बैंक की आर्यनगर, अलवर स्थित ब्रांच ने किसोरी गांव को 2 अप्रैल को अपना लिया है जहां के 7 मूर्तिकारों को ऋण की पहली किश्त पत्रकारों के सामने दी गई । बैंक के क्षेत्रीय प्रबन्धक श्री गोसाईं ने बताया कि दो दिन के ही अथक प्रयास से किसोरी गांव के मूर्तिकार ऋण लेने के लिए तैयार हो गए । यहां करीब 400 मूर्तिकार हैं जिनमें अधिकांश जयपुर में मूर्ति विक्रेताओं के यहां नौकरी करते हैं । इन सबको वापस गांव लाने की योजना है ।

किसोरी गांव मूर्तिकला के क्षेत्र में काफी नामी है । यहां 6 हजार रु० तक की मूर्ति बिक चुकी है । इन दिनों एक मूर्ति तैयार हुई है जिसे 5 कारीगरों ने 5 महीने में तैयार किया है और इसकी कम से कम कीमत 18 हजार रु० आंकी गई है ।

किसोरी गांव मुख्य सड़क से करीब 2 कि० मी० दूर है जहां कच्चा रास्ता है । सड़क बन जाने और बिजली आने से गांव का विकास हो सकता है । तभी यहां के विख्यात मूर्तिकारों को उनकी कला का लाभ मिल सकेगा ।

श्री गोसाईं ने पत्रकारों को बताया कि अलवर जिले में कुल 1869 गांव हैं जिनमें से 338 गांवों तक पक्की सड़कें हैं । बैंक की शाखाएं 416 गांवों तक पहुंची हैं जिनमें से 191 गांव सघन ऋण देने के लिए गोद लिए गए हैं । ऋण योजना में 312 ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों से मुक्त 10 गांव बसाए गए हैं जिनमें 'डोली का बास' शामिल नहीं है ।

जिन शिल्पियों ने आशा छोड़कर काम की तलाश में अपने गांव छोड़ दिए थे वे पुनः गांव लौट आए हैं और स्वतन्त्रतापूर्वक अपने पैतृक काम से रोजगार कर रहे हैं ।

बैंक ने राजस्थान में दिसम्बर, 1980 तक बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत 15.18 करोड़ रु० के ऋण दिए । क्षेत्रीय कार्यालय, जयपुर में इसके लिए एक स्वतन्त्र कक्ष स्थापित किया गया है।

श्री गोसाईं ने बैंक के क्षेत्रीय कार्यालय की गतिविधियों की जानकारी देते हुए बताया कि बीकानेर में खादी बुनकरों के लिए करघा शैड बनाने की योजना बनाई गई है । एक गांव के 33 बुनकरों को 33 लाख रुपये के ऋण दिए गए हैं तथा इस योजना का अन्य गांवों में प्रसार किया जा रहा है । राजस्थान खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड के सहयोग से एक हजार शिल्पियों और कारीगरों को 30 लाख रुपये के ऋण दिए गए । उदयपुर के पिछड़े इलाकों में दिसम्बर, 1980 तक 2518 आदिवासियों को 65 लाख रु० के ऋण दिए गए ।

ग्रामीण क्षेत्रों में पम्पसेटों को ऊर्जा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से स्टेट बैंक ने अब तक चार योजनाएं स्वीकृत की हैं । 80 लाख रु० की इन योजनाओं के लिए अब तक 35 लाख रु० दिए जा चुके हैं । तथा 6.38 लाख रु० राजस्थान राज्य विद्युत बोर्ड को और दिए जा रहे हैं ।□

देवेन्द्र उपाध्याय,
सी-7/315-बी, लारेंस रोड,
दिल्ली-110035 ।

सम्पादकीय

. . . . . . (आवरण पृष्ठ 2 का शेषांश)

हैं। मीलों चलने पर एक घड़ा पानी नसीब हो जाए तो वे अपने को बड़ा भाग्यशाली समझती हैं। यहां नारु आदि रोगों का प्रकोप अशुद्ध जल पीने से ही होता है । यह स्थिति सिर्फ राजस्थान में ही नहीं, बल्कि देश के अन्य अनेक भागों में भी पाई जाती हैं। इस समस्या से जूझने के लिए हमारी सरकार ने सभी समस्याग्रस्त गांवों को छठी योजना के अन्त तक यानि 1985 तक पीने का पानी उपलब्ध कराने का दृढ़संकल्प कर लिया है और इस काम पर लगभग 2000 करोड़ रुपये की राशि खर्च की जाएगी । ग्रामीण जल वितरण कार्यक्रम के अन्तर्गत चालू वित्त वर्ष के लिए पहले 65 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गई थी परन्तु अब इसे बढ़ा कर एक अरब 10 करोड़ रुपये कर दिया गया है।

समस्याग्रस्त गांवों की कोटि में वे गांव आते हैं जहां पीने का पानी 1.6 किलोमीटर की दूरी पर है या 15 मीटर से अधिक गहराई पर है अथवा जहां के पानी से हैजा या प्रदूषण फैलता है या जहां के पानी में स्वास्थ्य के लिए हानिकारक खारापन या लोहा , फ्लोराइड या दूसरे विषैले तत्वों की अधिकता हो।

संयुक्त राष्ट्र 1981—90 के दशक को अन्तर्राष्ट्रीय जल वितरण तथा स्वास्थ्य रक्षा दशक घोषित कर चुका है। हमारा देश संयुक्त राष्ट्र की योजना के अनुरूप सभी देशवासियों को न्यूनतम जलपूर्ति और स्वास्थ्य रक्षा सुविधाएं उपलब्ध करने के लिए प्रतिबद्ध है।

जहां तक सफाई व्यवस्था का संबंध है, 25 प्रतिशत या इससे अधिक ग्रामीण जनसंख्या के लिए स्वच्छ शौचालयों का बन्दोबस्त करने का इरादा है। साथ ही 80 प्रतिशत शहरी जनसंख्या के लिए भी मल निकास नालियों और नालियों से जुड़े स्वच्छ शौचालयों की व्यवस्था करने की योजना है। इन सब कार्यों के लिए अनुमानतः 15000 करोड़ रुपये की व्यवस्था की जाएगी ।

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम का लेखा जोखा

डा० हेमचंद जैन

भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्र का योगदान न केवल 70 प्रतिशत लोगों को रोजगार प्रदान करने में है वरन् राष्ट्रीय आय में 50 प्रतिशत के लगभग अंश इसी क्षेत्र के द्वारा ही प्रदान किया जाता है। उद्योगों को कच्चे माल की सम्पूर्ति तथा निर्मित माल की खपत के लिए भी बाजार भी इसी क्षेत्र के अन्तर्गत है। इस योगदायी भूमिका के बावजूद भी, ग्रामीण भारत को राष्ट्रीय विकास कार्यक्रमों का न इतना सुलाभ मिल सका है, जितनी अपेक्षा की गई थी और न आर्थिक विकास नियोजन प्रक्रिया में, इन क्षेत्रों के रहने वालों, विशेषकर कमजोर वर्ग के लोगों को, जितना भागीदार होना चाहिए था, उस सीमा तक वे नहीं हो सके है। ग्रामीण क्षेत्र ही सम्पूर्ण देश के आधार स्तम्भ हैं और इनकी समृद्धि तथा विकास में संलग्नता पर ही राष्ट्रीय विकास की उच्च उपलब्धि निर्भर करती है। इन सह-संबंधों की महत्ता के होते हुए भी, विगत 30 वर्षों के नियोजित आर्थिक विकास के बाद भी, देश में ग्रामीण उत्थान के मार्ग में गरीबी और बेरोजगारी तथा इन दो समस्याओं के कारणों एवं प्रभावों से संबंधित अन्य समस्याएं, ग्रामीण-भारत को आच्छादित करके जड़ीभूत किए दे रही हैं।

विकास के प्रयासों का लेखा जोखा

ग्रामीण विकास के संबंध में स्वतन्त्रता के पहले और बाद में अनेक प्रयासों, प्रयोगों और कार्यक्रमों को चालू किया गया है। स्वतन्त्रता के पूर्व विदेशी शासकों ने अपने प्रयत्नों को केवल शहरी क्षेत्रों पर ही केन्द्रित किया तथा ग्रामीण क्षेत्रों को सस्ते-श्रम एवं कृषि-उत्पादनों की सम्पूर्ति के रूप में ही देखा समझा। भारतीय अर्थव्यवस्था विदेशी अर्थव्यवस्था की अनु-सेवी रही और भारत में प्रशासन तंत्र पर उनकी मजबूत पकड़ बनी रही—इन दो उद्देश्यों की प्राप्ति में ही औपनिवेशिक शासकों का हित निहित था और नीति निर्माण तथा कार्यक्रम—कार्यान्वयन का आधार भी यही था। स्वतन्त्रता के पहले, तकावी—ऋण वितरण के सिवाय, ग्रामीण विकास के क्षेत्र में शासन द्वारा पोषित कोई भी कार्यक्रम हाथ में नहीं लिया गया। यद्यपि जन-नेताओं के द्वारा अपनी सीमाओं के भीतर ग्रामीण पुनर्निर्माण कार्यक्रमों को देश के विभिन्न अंचलों में चालू किया। महात्मा गांधी ने तो यहां तक घोषित किया कि लोगों को गरीबी एवं अज्ञानता से निकाले बिना राजनैतिक मुक्ति का कोई अर्थ नहीं है। अतः स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से ही ग्रामीण विकास के संबंध में गंभीर रूप से सोच विचार प्रारम्भ हुआ तथा बिखरे प्रयासों की अपेक्षा संगठित कार्यक्रम शुरू करने पर जोर दिया गया। वर्ष 1952 में देश के कतिपय अंचलों में सामुदायिक विकास कार्यक्रम सरकार के द्वारा चालू किया गया—इस उम्मीद से कि यह कार्यक्रम जनता का तथा जनता के लिए कार्यक्रम हो जाएगा। इस कार्यक्रम से अपेक्षित परिणाम तो हासिल नहीं हुए, परन्तु इस कार्यक्रम के द्वारा विकास कार्यों को ग्रामीण अंचलों में ले जाने में तथा सामाजिक-आर्थिक विकास का संरचना आधार तैयार करने में बहुत मदद मिली। बाद में वित्तीय संसाधनों की अपर्याप्तता के कारण तथा कृषि-उत्पादनों की कम सम्पूर्ति के कारण, कृषि विकास से संबंधित गहन कृषि जिला कार्यक्रम को 1960 से तथा 1964–65 में देश के 114 **जिलों** में गहन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम लागू किया गया। देश में मौजूदा उस समय की परिस्थितियों के संदर्भ में उत्पादन और विशेषकर कृषि-उत्पादन बढ़ाने संबंधी कार्यक्रमों पर ही जोर था। इन कार्यक्रमों के फलस्वरूप ग्रामीण विकास के लिए क्षेत्र उपागम नीति कार्यक्रमों का प्रादुर्भाव हो सका। इस का विस्तार वर्ष 1970–71 में सूखा-उन्मुख क्षेत्र कार्यक्रम, वर्ष 1971–72 में आदिवासी क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1973–74 में पहाड़ी क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1974–75 में कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम, 1975–76 में सम्पूर्ण गांव विकास कार्यक्रम को कार्यान्वित करके, किया गया। इन क्षेत्र विशेष की विशिष्ट समस्याओं के निराकरण से संबंधित सभी कार्यक्रमों के कारण, यह नतीजा दिखाई दिया कि ग्रामीण समाज के समृद्ध वर्ग के व्यक्तियों ने ही, ग्रामीण क्षेत्रों में सार्वजनिक कोष के भारी विनियोगों का सुलाभ प्राप्त किया है। कृषि निविष्टियों के लिए शासकीय आर्थिक सहायता के प्रावधान का फायदा बड़े किसानों के द्वारा ही लिया गया। संक्षेप में, ग्रामीण क्षेत्र में विकास-राशि के भारी विनियोगों के कारण भी धनी ज्यादा धनी हो रहे थे और गरीब, और गरीब हो रहे थे। इस स्थिति के उत्पन्न होने के कारण, योजना-निर्माताओं ने ग्रामीण विकास प्रयासों के सम्पूर्ण-दर्शन पर पुनर्विचार किया तथा ग्रामीण अंचलों में कमजोर वर्ग के सीमान्त किसान, लघु किसान, कृषि श्रमिक, विशेषकर अनुसूचित जातियों तथा आदिवासियों, जो अत्यधिक गरीब वर्ग के हैं, की आय बढ़ाने से संबंधित कार्यक्रम को चालू करने पर जोर दिया गया क्योंकि आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग की गरीबी की तीव्रता को यदि कम नहीं किया गया तब यह समृद्ध वर्गों की समृद्धि के लिए खतरा उत्पन्न कर सकती है। देश में 1971–72 में शुरु किए गए लघु एवं सीमान्त कृषक विकास अभिकरणों के द्वारा, राज्य आर्थिक सहायता को ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक रूप से उपेक्षित कमजोर वर्ग के फायदे पाने वाले विगत समूह

को ही सीमित कर दिया गया। कार्यक्रम के द्वारा कोशिश यह की गई, जिससे नियत वर्ग के आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों को आर्थिक सहायता समर्थन के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में उत्पादक क्रिया-कलापों में रोजी रोटी मिल सके तथा अधिक रोजगार, अधिक आय की स्थिति में गरीब की दरिद्रता में कुछ कमी होकर विकास के सुलाभों में उसकी भागीदारी हो सके।

लघु किसान विकास अभिकरण के दोष

लघु किसान विकास अभिकरण कार्यक्रम के कार्यान्वयन के कुछ वर्षों के बाद, जब ग्रामीण गरीब पर इस कार्यक्रम के फलस्वरूप प्रभाव के सम्बन्ध में अध्ययन किए गए तब यह मालूम हुआ कि यह कार्यक्रम भी दोषामुक्त नहीं है। इसके अन्तर्गत ग्रामीण गरीब की पहचान का आधार कोई वैज्ञानिक सर्वेक्षण को अपना कर नहीं किया गया। गरीबों में अत्यधिक गरीब को इसके अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किया गया तथा फायदे पानेवाले नियत समूह में से सबसे ऊपर के व्यक्तियों को ही सहायता के लिए चयन किया गया। कार्यक्रम को सम्पूर्ण परियोजना क्षेत्र में अव्यवस्थित ढंग से आरंभ किया गया, जिससे पर्यवेक्षण तथा अनुसरण समस्याएं उत्पन्न हो गई। खण्ड स्तर पर कोई ठोस योजना तैयार नहीं की गई तथा कार्यक्रम को तदर्थ आधार पर ही चालू रहने दिया गया। धनराशि के आबंटन पर ही जोर दिया गया और अनुश्रवण और मूल्यांकन की व्यवस्था को विकसित नहीं किया गया। अतएव अभी तक कार्यान्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अनुभवों के आधार पर यह महसूस किया गया कि इन कार्यक्रमों का पुनर्स्थापन एवं पुनरायोजन करना जरूरी हो गया है। वर्ष 1976 में समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को लागू करने पर सोच विचार किया गया।

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम

वर्ष 1978-79 से समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को शुरू करके न केवल लघु कृषक विकास अभिकरण कार्यक्रम के दोषों को दूर किया गया है, वरन् ग्रामीण गरीबों में से जो अधिकतम गरीब हैं, उनकी आर्थिक दशा को सुधारने के लिए प्रत्यक्ष प्रहार के रूप में इस कार्यक्रम में जोर दिया गया है। ग्रामीण विकास बहुक्षेत्रीय गतिविधि है। उसके अन्तर्गत न केवल कृषि विकास परन्तु ग्रामोद्योगों तथा सामाजिक-आर्थिक आधारिक संरचना-सुविधाओं को भी शामिल किया जाता है। इस कार्यक्रम की मूल धारणा है ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब व्यक्तियों के जीवन स्तर को ऊपर उठाना तथा देश में गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने वालों को लाभ-जनक कार्यों में ज्यादा रोजगार के अवसरों से क्रय शक्ति में वृद्धि करने में सहायता प्रदान करना। ग्रामीण गरीबी की रेखा को वर्ष 1970-71 के मूल्य स्तर पर 5 व्यक्तियों के औसत परिवार की वार्षिक आय 3500 रुपये के आधार पर निर्धारित किया गया है, क्योंकि यह आय ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति 2400 किलोरी पोषण की खरीद के लिए पर्याप्त है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत फायदे पाने वाले परिवारों की पहचान पारिवारिक सर्वेक्षण को सावधानीपूर्वक करके किया जाएगा। सहायता एवं चयन की इकाई व्यक्ति न होकर परिवार होगा तथा कार्यक्रम के द्वारा पारिवारिक आय को गरीबी के स्तर से ऊपर उठाने की कोशिश की जाएगी। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 51 प्रतिशत व्यक्ति गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे हैं। तथा ग्रामीण एवं शहरी व्यक्तियों के बीच आय, अवसर एवं सुविधाओं का अन्तर न केवल बहुत अधिक है, बल्कि यह अन्तर दिन ब दिन बढ़ रहा है, तब ग्रामीण विकास के ऐसे कार्यक्रम की आवश्यकता को नजर-अंदाज नहीं किया जा सकता, जिसका उद्देश्य फायदे पाने वाले गरीब तबके के नियत समूह को गरीबी की रेखा से न केवल ऊपर उठाना है, परन्तु साथ ही साथ यह भी ध्यान में रखना है कि ऐसे गरीब जिनको फायदा प्राप्त हुआ है फिर से गरीबी की रेखा में खिसक न जाएं।

समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को अब देश के समस्त 5011 विकास खण्डों में 2 अक्तूबर 1980 से लागू कर दिया गया है तथा योजना आयोग ने वर्ष 1980-81 के लिए हरेक विकास खण्ड के लिए, 5 लाख रुपये, वर्ष 1981-82 के लिए 6 लाख रुपये तथा वर्ष 1983-85 के लिए 8 लाख रुपयों का प्रावधान किया है। ग्रामीण अंचलों के गरीबों में से अत्यधिक गरीब को संस्थागत साख संस्थाओं की साख मिल सके तथा शासकीय आर्थिक मदद के साथ इस वर्ग के व्यक्तियों की बेरोजगारी, अल्प-रोजगारी घटकर, आय में वृद्धि होकर, रहन-सहन के स्तर में वृद्धि ही इस कार्यक्रम की संरचना का आधार है।

कार्यक्रम संबंधी कतिपय आलोचनाएं

इस कार्यक्रम का फैलाव देश के सभी विकास खण्डों में अचानक लागू करके शुरू से ही कार्यक्रम को गुणात्मक की अपेक्षा मात्रात्मक प्रगति मूलक अधिक बना दिया है। कहीं इस कार्यक्रम का वही हश्र न हो, जो अन्य ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का हुआ है। लगभग 30 वर्षों के नियोजित आर्थिक विकास के इतिहास में अनेक कार्यक्रम गांवों के विकास के संबंध में शुरू किए गए हैं, परन्तु देश अभी भी इस संबंध में प्रयोगात्मक दशा में भटक रहा है। विकास खण्ड स्तर पर वर्तमान वित्तीय प्रावधान "ऊंट के मुंह में जीरे" के समान है तथा ग्राम स्तर के विकास अभिकर्त्ता की पहल, सूझबूझ और उत्प्रेरणा पर ही सम्पूर्ण कार्यक्रम की उपलब्धियां आधारित हैं। प्राथमिक स्तर पर संगठन की अपर्याप्तता तथा जिले स्तर पर आपेक्षित समन्वय न होने के कारण, यद्यपि कार्यक्रम का दर्शन सही होते हुए भी क्रियान्वयन के बाद की उपलब्धि अधिक आशाजनक दिखाई नहीं दे रही है। यह कार्यक्रम भी अन्य पूर्ववर्ती ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के समान ही, गरीब एवं कमजोर वर्ग का कार्यक्रम, उनके सहयोग एवं भागीदारी के दृष्टिकोण से, कहां तक सफल हो पाएगा, इसमें संदेह ही है।। यदि कार्यक्रम को सम्पूर्ण देश में शीघ्रता से लागू न करके, संगठनात्मक ढांचे, वित्तीय प्रावधान इत्यादि पूर्व–शर्तों के वास्तविक आंकलन के आधार पर क्रमशः बढ़ाया जाता, तब वास्तव में उपलब्धियों के साथ साथ गरीब लोगों की गंभीर गरीबी की समस्या के घटने की अधिक संभावना की जा सकती थी तथा लोगों से इस कार्यक्रम को अपना समझकर अपनाने में अग्रणी भूमिका निभाने की अपेक्षा भी की जा सकती थी। भविष्य ही इन प्रश्नों का उत्तर देगा।

कृषि अर्थ शास्त्र विभाग, ज०ने० कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर।

लोक संस्कृति और पेड़-पौधे

डा० कमलाकान्त हीरक

भारतीय लोक संस्कृति की आत्मा प्रकृति की गोद में पलती, पनपती और फलती-फूलती है। जिसमें साधारण जनता का निश्छल प्रेम, अटूट विश्वास एवं जीवन के फलदायी सपने सिमटे हैं। लोक संस्कृति के बीच सांस ले रहे ऐसे प्राणदायी स्रोत हैं जो भारतीय जन-जीवन और भारतीय संस्कृति को सशक्त बनाए हुए हैं। तभी तो हमारी संस्कृति जीवित है क्योंकि संस्कृति मरती नहीं, मिटती नहीं। प्राचीन काल से लेकर आज तक के इस उदय काल में हमारी संस्कृति और परम्परा में केवल तोड़-मरोड़, उतार-चढ़ाव एवं बदलाव भर हुए हैं, इसकी मृत्यु नहीं। संस्कृति का संबंध हमारे मन के, हृदय के और मस्तिष्क के संस्कारों से रहता है। इस दृष्टि से संस्कृति स्थायी है। संस्कृति शब्द विशिष्ट जनसमुदाय के विचारों का बोधक है और लोक संस्कृति साधारण जन समुदाय के विचारों का बोधक है।

और फिर जहां लोक संस्कृति की बात उठती है, जीवन को प्रभावित करने करने वाले पेड़-पौधों की बातें भी होने लगती हैं क्योंकि बिना इनमें हम एक पल भी नहीं जी सकते, सांस नहीं ले सकते। सच पूछा जाए तो पेड़-पौधों पर लोक मानव की इतनी प्रगाढ़ आस्था एवं विश्वास रहा है, जिसे शब्दों में व्यक्त कर पाना बड़ा ही कठिन है इस बात की पुष्टि भारतीय संस्कृति में परम्परागत पौराणिक कथाओं, आख्यानों, तीर्थाटनों, व्रत-त्योहारों द्वारा होती है। ये सारी चीजें ऐसी हैं जिनका संबंध किसी न किसी रूप से वृक्षों के साथ जुड़ा हुआ है। एक स्थान पर स्वामी विवेकानन्द ने कहा है, "अपने देश में जो उत्सव, त्यौहार व्रत उपवास मनाए जाते हैं, उनका उद्देश्य रहता है मानव जीवन मे जुटे सारे तत्वों और वनस्पतियों को अंतःकरण मे प्यार करना।"

लोक संस्कृति में जिन मूल तत्वों का विशिष्ट स्थान है, उनमें से प्रकृति की उपासना भी एक है। ईसाई पादरी एड्रियन फोर्टस्क्यू ने अपनी पुस्तक 'दि लेसर क्रिश्चियन चर्चेज' में लिखा है, "चौथी शताब्दी में फारस में रहने वाले ईसाई वहां जब सताए जाने लगे तब वे भागकर भारतवर्ष में आकर बस गए और प्रकृति उपासना में जुट गए।" लोथेस चूली नामक विदेशी विद्वान यहां के जंगलों को देखकर बोल उठा, "अहा ! कैसा अदभुत है यह ! कैसा अदभुत है यह प्रदेश ! मैं इन वृक्षों को किन नामों से पुकारूं, किन नामों से संबोधित करूं जबकि इन्हें प्रथम बार ही देख रहा हूं।" इसी प्रकार चीनी यात्री ह्वेन-सांग ने कहा था, "यहां की भुमि कितनी उपजाऊ है अन्न का तो पूछना ही नहीं, जंगलों की हरियाली अदभुत है और फूलों तथा फलों की आश्चर्यजनक अधिकता है।"

तरह-तरह के पेड़-पौधों एवं फल-लताओं से भरा हुआ कपिस, लम्पक एवं खोतान के क्षेत्र भी काफी महत्वपूर्ण थे। खोतान शहतूत के पर्याप्त उद्यानों के कारण रेशम उत्पादन का केन्द्र बन गया था। चीन देश को रेशम की प्रथम भेंट यहीं से प्राप्त हुई थी। फाहियान और हेनसांग ने भारत की सीमा पर बसे काशगढ़ उड्डीयन, खोतान, गान्धार और भिदा की बड़ी जनसंख्या तथा समृद्धि के प्रमाण में पेड़-पौधों का विशेष महत्व दर्शाया है। सातवीं सदी में स्वम्न घाटी तक्षशिला की जलवायु इतनी उपयुक्त थी कि वहां पर फूलों-फलों के वृक्षों का पाया जाना सिद्ध होता है।

संस्कृति विभिन्न मनोवृत्तियों का संगम है जिसमें भोगवाद, भौतिकवाद, अध्यात्मवाद एवं प्रकृतिवाद के बीज निहित हैं।

जैसी संस्कृति वैसी प्रकृति
जैसी प्रकृति वैसी प्रवृत्ति
जैसी प्रकृति वैसी सभ्यता

और जब यह ही बीज जीवन की उर्वर भुमि में पड़ते हैं, वहां विशाल संस्कृति और सभ्यता रूपी वृक्ष का जन्म होता है। जिसमें प्रकृति से लेकर प्रवृत्ति तक की सारी बातें निहित रहती हैं। प्रकृति वह चीज है जिसके अन्तर्गत लोक मानव का प्यार, मोह एवं आस्था बंधी हो। वृक्ष चाहे बबूल का कांटों वाला हो, ताड़ का उंचा छायाहीन हो, बांस का पतला दुबला हो, पीपल, बड़, नीम आदि का छायादार हो अथवा आम, सेब, अमरूद, नाशपाती का फल वाला हो या फिर गंधहीन या सुगंधवाला फूलों का ही क्यों न हो, लोक मानव ने इन पेड़ों का प्रयोग या तो किसी प्रतीक या उपमान के रूप में किया है अथवा किसी निर्जीवन की आकांक्षाओं की पूर्ति के रूप में।

भारतीय प्राचीन साहित्य में ऐसी ढेर सारी कथाएं एवं आख्यान हैं जिनमें आम, महुआ, इमली, नीम, बबूल, पीपल बड़, पाकड़ एवं अनेक फूल जैसे कमल, गुलदाउदी, गुलाब, आदि को यौन जीवन की विकृति, संतोष, असंतोष, ग्लानि, घृणा, हीनता, तथा रति कर्म के साथ सीधा संबंध जोड़ा गया है। वेद, उपनिषद्,

शास्त्र, महाभारत, अठारह पुराण, रामायण इत्यादि काव्य जिनमें हमारी संस्कृति और सभ्यता की कहानी है, उनमें स्थान-स्थान पर लिखा मिलता है कि पेड़-पौधों से घृणा करना, अपरिपक्व अवस्था में काटना, उन्हें प्यार न देना पतन की ओर ले जाता है। मानव को ऐसा करने से मुक्ति नहीं मिलती, वह नरक का भागी होगा। हमारी संस्कृति बतलाती है कि ऋषि-मुनियों को वृक्षों-लताओं से कितना मोह था, एक स्थान पर कालिदास ने 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' में शकुंतला और दुष्यंत के गंधर्व विवाह के पश्चात् कण्व ऋषि आम्र वृक्ष का सहारा पकड़े हुए नवमल्लिका लता को सुनाते हुए शकुंतला से कहते हैं :—

संकल्पितं प्रथमेव मया तवार्थे
भरतारमात्मसदृशं सुकृतैर्गता त्वम् ।
चूतेन सश्रितवती नव मालिकेभ
अस्यामहं त्वयि च सम्प्रति वीतचिन्त:

अर्थात् शकुंतला बेटी ! तेरे लिए जैसे वर की चिन्ता मुझे पहले से ही थी, वैसा ही योग्य वर तूने अपने पुण्य-प्रताप से प्राप्त कर लिया। इस नव मल्लिका को भी आम का सहारा मिल गया और अब इसी से मुझे कैसी भी चिन्ता नहीं है।

कुषाण कालीन मूर्तियों को देखने से बौद्ध संस्कृति की झलक मिलती है। इनमें कुषाण युवतियों को कदम्ब, अशोक, आम और चंपक गुलाब फूलों से क्रीडा करते हुए दिखाया गया है। प्राचीन काल की संस्कृति और सभ्यता में अशोक वृक्ष को लोक जीवन में इतना अधिक आदर प्राप्त था कि अशोक भी अपने को गौरवांवित समझता था कि अशोक शृंगारिक परम्परा में एक कड़ी था, आज भी इसकी गहरी हरी पत्तियों को देखकर झुलसा-सूखा मन भी हरा हो उठता है। मन सौन्दर्य में डूबने उतरने लगता है।

गौतम ने जिस शीतल वृक्ष की छाया में बैठकर बुद्धत्व प्राप्त किया था। वह पीपल का प्रकाश पुन्ज वृक्ष था। हावैल एक स्थान पर लिखते हैं,"जो मानव और पशु दोनों की श्रद्धा के भाजन हैं, वे धर्म के प्रतीक पदचिह्न और बोधि वृक्ष, जिनमें बुद्ध का आवास है, परन्तु वे स्वयं बुद्ध नहीं हैं।"

उपनिषद् काल में पेड़-पौधों एवं फूल-लताओं का काफी महत्व दर्शाया गया है। आभूषणों में सोने को छोड़ कर अन्य धातुओं का प्रयोग करना निषिद्ध था। किन्तु सुगंधित पुष्पों के आभूषणों को प्रमुख स्थान प्राप्त था। जिस स्त्री के गले में, केश (शिखा) में, हाथ में सुगंधित आकर्षक फूलों की मालाएं या गुच्छे रहते थे, उनके प्रति लोगों के विचार निर्मल हुआ करते थे।

लोक संस्कृति की नींव इतनी गहरी और दूर तक फैली हुई है जिसे किसी न किसी रूप में स्वीकारना ही पड़ता है। सत्य को हमारी संस्कृति ने एक परमात्मा का रूप कहा है। ब्रह्मा से लेकर वृक्ष, घास-फूस तिनके तक सभी पदार्थ माया से कल्पित है। एक परब्रह्म ही सत्य है, उसी को जानकर पृथ्वी के सारे जीव, सारी वनस्पतियां सुखी होती हैं।

आब्रह्मतृणपर्यन्तं भायंया कल्पितं जगत् ।
सत्यमेकं परब्रह्म विदित्वैवं सुखी भवेत् ॥

यहां तिनके से लेकर सब कुछ माया द्वारा कल्पित कहा गया है। तभी तो हमारी संस्कृति की विशालता इतनी है कि इसमें जीने और सांस लेने वाले हर मनुष्य को, तिनके से लेकर छोटे-बड़े पेड़-पौधों तक के साथ भी न्याय ही बरतने की सीख दी गयी है और प्रेम करने की बात कही गई है। यदि हम पेड़-पौधों की उपयोगिता पर ध्यान दें तो उनसे हमें शुद्ध वायु मिलती है। जिससे वातावरण शुद्धसात्विक और स्वास्थ्यप्रद बनता है। आज के पर्यावरण के युग में वृक्षारोपण और आर्थिक महत्व की वस्तु है। वृक्षों से हमें खाने के लिए फल, जलाने के लिए लकड़ी मिलती है। अतः वृक्षारोपण या वन लगाना धर्म है। □

रांची कृषि महाविद्यालय
बिहार

दुस्साहस और दया

तेज धूप थी। दो युवकों ने एक छोटे से गांव के छोटे से मकान का दरवाजा खटखटाया। द्वार एक बुढ़िया ने खोला।

एक युवक ने बड़े ही दयनीय भाव से कहा "माई, बहुत प्यास लगी है, थोड़ा ठण्डा पानी पीने को मिलेगा।"

"क्यों नहीं बेटा, लेकिन तुम लोग इतनी तेज धूप में बाहर क्यों खड़े हो। पहले अन्दर तो आ जाओ"—बुढ़िया ने बड़े सरल भाव से कहा और अन्दर जाकर दोनों युवकों के लिए नींबू की शिकंजी बनाने लगी।

बुढ़िया नींबू का रस बनाने में व्यस्त थी कि एकाएक उन दोनों में से एक ने अपनी पिस्तौल तान ली और बोला—"खबरदार, जितना माल तुम्हारे पास हो निकाल कर रख दो। हमें जल्दी ही यहां से जाना है।" वे दोनों युवक डाकू थे।

"बुढ़िया तनिक भी नहीं घबराई। बोली—"हां, हां बेटा घर में जो कुछ गहना-कपड़ा है वह भी लेते जाना, लेकिन ऐसी धूप में जाओगे, पहले नींबू का रस तो पीते जाओ।"

डाकुओं का मन एकाएक पसीज गया। ऐसे दुस्साहस पर इतना दयामय भाव। वे दोनों बुढ़िया के पांवों में गिर गए। □

डा० प्रेमचन्द्र गोस्वामी

परिवार कल्याण कार्यक्रम

लोगों ने नसबन्दी के महत्व को समझा

✻ नरेन्द्र सिंह ✻

चित्तौड़ के ऐतिहासिक किले की तलहटी के पास स्त्रियों का मेला सा लगा हुआ था । वे बाहर से आकर यहां इकट्ठी हो रही थीं । इस बारे में कुछ जानने के इरादे से अभी-अभी आई कुछ स्त्रियों से मैंने पूछा कि यहां क्या हो रहा है? सबसे आगे खड़ी स्त्री ने जो ओढ़नी और लंहगे में थी, बताया कि आज यहां नसबंदी के आपरेशन होंगे । लगभग 40-50 वर्ष की इस स्त्री से मैंने पूछा कि क्या आप भी नसबन्दी कराने आई हो तो उसने कहा "नहीं, मैं तो बहुत पहले अपना आपरेशन करा चुकी हूं । आज तो मैं अपनी बहू को यहाँ लेकर आई हूं ।" उसके साथ ही खड़ी साड़ी वाली 20-22 वर्षीय युवती ही उसकी बहू सुशीला थी । मैंने उससे पूछा तुम्हारे कितने बच्चे हैं तो उसने बताया "दो लड़के और एक लड़की" उसका सबसे छोटा बच्चा पांच महीने का था जिसे वह गोद में लिए हुए थी । मैंने पूछा, आप नसबन्दी क्यों करा रही हो ? सुशीला ने कहा "तीन बच्चे बहुत हैं । हमारी जितनी आमदनी है उससे हमारा और बच्चों का बड़ी मुश्किल से पूरा पड़ता है ।"

यह बातचीत चित्तौड़गढ़ के पास लगाए गए नसबन्दी शिविर में हो रही थी इस शिविर का आयोजन स्वास्थ्य अधिकारियों ने परिवार कल्याण कार्यक्रम के अन्तर्गत किया था । राजस्थान सरकार नसबन्दी को बढ़ावा देने के लिए पुरुषों को 80 रुपये तथा स्त्रियों के बंध्याकरण के लिए 50 रुपये तथा लेपरोस्कोप से नसबन्दी कराने पर 30 रुपये दे रही है । इसके अलावा नसबन्दी कराने वाले प्रत्येक व्यक्ति को केन्द्र सरकार की योजना के अन्तर्गत 70 रुपये दिए जाते हैं ।

कम बच्चे : हर तरह अच्छे

स्त्रियों और बच्चों की भीड़ से जरा हटकर खड़े एक अधेड़ उम्र के पुरुष से मैंने पूछा कि क्या आप भी अपनी पत्नी को यहां नसबन्दी के लिए लाए हो ? यहां से लगभग तीन मील दूर के बरहाड़ा गांव के श्री गोबिन्द सिंह ने जवाब दिया, "नहीं, मेरी पत्नी काफी पहले ही आपरेशन करा चुकी है । मैं तो यहां अपने दोनों छोटे भाइयों की बहुओं को आपरेशन कराने के लिए लेकर आया हूं ।" उनके छोटे भाई मानसिंह के तीन बच्चे हैं और सबसे छोटे भाई शिवसिंह के दो । उनकी पत्नियों की आयु लगभग 25 और 23 वर्ष है । जब मैंने पूछा कि अभी एक भाई के दो ही बच्चे हैं, उनका आपरेशन क्यों करा रहे हो तो उन्होंने कहा "हम ज्यादा बच्चों का नतीजा देख चुके हैं । हमारे बड़े भाई के छः बच्चे हैं।" मैंने पूछा कि आपको यहां कोई आदमी पैसों का या दूसरा लालच देकर तो नहीं लाया है तो उन्होंने कहा कि "हम बिलकुल अपनी मर्जी से आए हैं । अपना भलाबुरा हम खुद भी सोच सकते हैं । जो पैसा नसबन्दी आपरेशन के लिए दिया जाता है वह ज्यादा मायने नहीं रखता ।"

लोगों ने महत्व समझा

शिविर में इधर-उधर घूमने पर मैंने देखा कि दीवारों और कनातों पर "छोटा परिवार, सुखी परिवार," "सीमित परिवार, समृद्धि का आधार", "देर से शादी समय से बच्चा, बस दो बच्चे जीवन अच्छा", जैसे अनेक नारों के पोस्टर लगे थे । यहां आए लोगों से बातचीत करके उनमें उत्साह देखकर यह लगा कि लोगों के लिए ये नारे केवल थोड़े नारे ही नहीं रह गए हैं बल्कि वे इनके भाव का महत्व भी समझने लगे हैं । उन्हें अब यह विश्वास हो चला है कि अपनी और बच्चों की खुशियों और उनकी भलाई तथा देश के विकास के लिए परिवार को छोटा रखना बहुत जरूरी है लोगों में जागरूकता बढ़ने से प्रेरक का महत्व भी धीरे-धीरे कम होता जा रहा है ।

शिविर में ड्यूटी पर आए रेफ़रल हास्पीटल चित्तौड़गढ़ के मेकेनिक श्री मोहन सिंह ने बताया कि लोगों में नसबंदी कराने के प्रति बहुत उत्साह है । नसबंदी के शिविर के बारे में पता लगते ही इतनी अधिक संख्या में लोग आ जाते हैं कि डाक्टरों के लिए उनकी नसबंदी करना संभव नहीं हो पाता । नतीजा यह होता है कि कुछ लोगों को यह आशा लिए वापस लौटना पड़ता है कि अगली बारी हमारी भी नसबंदी हो जाएगी । निरक्षर और पिछड़ी जातियों की बहुलता वाले टोंक जिले के नसबंदी शिविर में समय की कमी के कारण जब डाक्टर सभी महिलाओं का आपरेशन नहीं कर सके तो वहां कि महिलाओं ने डाक्टर का घेराव करके उनसे आग्रह किया कि उन सबकी नसबंदी करके ही वे वहां से जाएं । इससे इस बात की पुष्टि होती है कि पिछड़े क्षेत्र के लोगों ने भी वहां परिवार को छोटा रखने के प्रति चेतना पैदा हो रही है ।

राजस्थान में जनवरी, 1980 में "लेपरोस्कोप" (आमतौर पर दूरबीन के नाम से लोकप्रिय) द्वारा स्त्रियों के नसबंदी आपरेशन की शुरुआत हुई । बहुत ही आसान और लगभग दो-तीन मिनट में पूरा हो जाने वाला यह आपरेशन स्त्रियों में आश्चर्यजनक रूप से लोकप्रिय हो रहा है । जनवरी से लेकर नवम्बर, 1980 तक लेपरोस्कोप द्वारा 41,286 नसबन्दी आपरेशन किए गए जो इस दौरान किए गए कुल नसबन्दी आपरेशनों का 53.6 प्रतिशत था ।

राजस्थान के अलावा, इस विधि से नसबन्दी के आपरेशन भारत में इस समय गुजरात, तमिलनाडु और राजस्थान तीन राज्यों में किया जा रहा है और सभी राज्यों में यह बहुत लोकप्रिय रहा है ।

लेपरोस्कोप द्वारा आपरेशन किए जाने के अनेक लाभ हैं । सबसे पहली बात तो यह है कि यह एक बहुत ही साधारण सुरक्षित और आसान आपरेशन है ।

दो-तीन मिनट में पूरा हो जाने वाले इस आपरेशन में रोगी को पूरी तरह बेहोश न करके केवल आपरेशन वाली जगह ही सुन करके आपरेशन किया जा सकता है। रोगी 4 से 6 घंटे बाद चल-फिर सकता है और अगले ही दिन से सामान्य काम-काज करने लायक हो जाता है। जबकि ट्यूबेक्टामी (बंध्यकरण) आपरेशन के बाद रोगी को छः-सात दिन अस्पताल में रहना पड़ता है और इसके बाद भी कुछ समय तक आराम करने की सलाह दी जाती है। एक डाक्टर एक दिन में ऐसे 150 से 200 आपरेशन कर सकता है। डाक्टरों, उपकरण व अन्य साज-सामान, समय और धन सभी दृष्टियों से यह किफायतकारी है। नियमित अस्पतालों और चिकित्सा संस्थानों में बड़े पैमाने पर इस प्रकार नसबन्दी के आपरेशन करके राष्ट्रीय लक्ष्य को तेजी से प्राप्त किया जा सकता है।

समूचे राजस्थान में पिछले वर्ष (1980–81) में कुल मिलाकर एक लाख से अधिक नसबन्दी आपरेशन किए गए जोकि पिछले चार वर्षों में किए गए नसबन्दी आपरेशनों से सबसे अधिक है। 1980–81 में 1.34 लाख नसबन्दी आपरेशनों का लक्ष्य रखा गया था। राजस्थान में इस समय जन्म-दर 35 प्रति हजार है जिसे 1982–83 तक घटाकर 30 प्रति हजार करने का लक्ष्य है।

केवल राजस्थान में ही नहीं बल्कि अन्य राज्यों में भी जनसंख्या में कमी लाने के सतत प्रयास जारी हैं। पिछले वर्षों में केरल, तमिलनाडु, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राज्यों में जन्म-दर को घटाने के लिए उल्लेखनीय प्रयास किए जा रहे हैं। परिवार कल्याण कार्यक्रम के अन्तर्गत किए गए विभिन्न प्रयासों के परिणामस्वरूप 1978-79 तक कुल मिलाकर 3 करोड़ 43 लाख 20 हजार बच्चों के जन्म को रोका गया।

1981 की जनसंख्या के अनुसार हमारी जनसंख्या 68 करोड़ से अधिक हो गई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 34 वर्षों में हमारी जनसंख्या बढ़ते-बढ़ते लगभग दुगुनी हो गई। 1971–81 के दशक में जनसंख्या लगभग 13.5 करोड़ बढ़ी है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जनसंख्या में वृद्धि को कम करने के प्रयास करना और इन प्रयासों में तेजी लाना बहुत आवश्यक हो गया है। यदि हम जनसंख्या वृद्धि की दर को कम नहीं कर सके तो गरीबी मिटाने के हमारे सभी प्रयास बेकार हो जाएगें। भारत सरकार ने देश के सर्वांगीण विकास और लोगों के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए परिवार कल्याण कार्यक्रम को हमेशा महत्व दिया है। 1981–82 के वार्षिक बजट में इस कार्यक्रम के लिए 155 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है।

परिवार कल्याण कार्यक्रम का अर्थ केवल जनसंख्या में कमी लाना ही नहीं है। पूर्णरूप से स्वैच्छिक इस कार्यक्रम का उद्देश्य स्वास्थ्य, जच्चा-बच्चा देखरेख, पोषण जैसी अनेक सुविधाएं उपलब्ध कराकर सही अर्थों में परिवार कल्याण करना है।

राष्ट्र के हित को देखते हुए यह आवश्यक है कि परिवार कल्याण कार्यक्रम सभी विवादों से ऊपर रहना चाहिए और इसे सभी वर्गों, सभी क्षेत्रों और सभी धर्मों के लोगों द्वारा राष्ट्रीय कार्यक्रम के रूप में अपनाया जाना चाहिए। इसलिए इस विषय पर राष्ट्रीय सहमति का विकास किया जाना चाहिए।

छठी योजना में (1980–85) में यह कहा गया है कि इस अवधि में ऐसी प्रक्रिया शुरु की जाएगी जिससे जनसंख्या में वृद्धि दर घटकर 1995 तक एक प्रति हजार हो जाए। देश में सभी धर्मों के लोगों में अपने परिवार को सीमित रखने के प्रति जो जागरुकता और चेतना पैदा हो रही है, उसे देखते हुए लक्ष्य प्राप्त कर लिए जाने की बहुत आशाएं हैं। ☐

किसान रबी खरीद अभियान को सफल करें

राव वीरेन्द्र सिंह

किसानों को नव वर्ष तथा गेहूं की सरकारी खरीद के समारम्भ के अवसर पर एक रेडियो प्रसारण में केन्द्रीय कृषि मंत्री राव वीरेन्द्र सिंह ने किसानों से आग्रह किया कि वे मंडियों में अधिक से अधिक गेहूं लाकर सरकारी अनाज भंडार को दें। उन्होंने कहा कि वह सरकार पर अपने हितों की रक्षा के लिए पूरा भरोसा रखें। सरकार उसके लिए वचनबद्ध है। उन्होंने कहा कि किसानों और गैर जिम्मेदार तत्वों के बहकाने और भड़काने में न आएं इससे उनका अपना नुकसान होता है। कृषि मंत्री ने गेहूं के खरीद मूल्य की चर्चा करते हुए कहा कि पिछले साल यह मूल्य 117 रुपये प्रति क्विंटल था। इस वर्ष के लिए कृषि मूल्य आयोग ने 127 रुपये प्रति क्विंटल का सुझाव दिया। किन्तु सरकार ने निर्णय किया है कि यह मूल्य 130 रुपये प्रति क्विंटल होना चाहिए। कृषि मंत्री ने कहा कि सरकार भाव तय करते हुए इस बात का ध्यान रखती है कि पैदावार के लिए किसानों को बीज, खाद, पानी, बिजली, मेहनत मजदूरी आदि सब चीजों पर कितना खर्च करना पड़ता है। सरकार की इस बात की पूरी कोशिश रहती है कि किसानों को उनकी पैदावार का पूरा भाव मिले। जिस तरह किसानों की उन्नति और खुशहाली के लिए सरकार उत्सुक है, उसी तरह सरकार की जिम्मेदारी देश की बाकी जनता के लिए भी है कि गरीबों, कमजोर वर्गों, मजदूरों, भूमिहीनों और कम तनख्वाह पाने वालों को पेट भर कर अनाज मिले। राव वीरेन्द्र सिंह ने आगे कहा कि किसानों की पैदावार की खरीद और सरकार की तरफ से उचित दामों पर इसका वितरण प्रबन्ध दोनों का ही गहरा सम्बन्ध है। उन्होंने कहा कि अन्न के मामले में देश अब न केवल आत्मनिर्भर हो गया है बल्कि निर्यात भी करने लगा है। यह सब प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा किसानों के हित में अपनायी हुई नीतियों का ही नतीजा है।

विकलांगों/अपंगों के लिए समाज में समानता व पूर्ण भागीदारी

✳ब्रह्मप्रकाश गुप्त✳

भारतीय संविधान में सभी व्यक्तियों के लिए, बिना किसी प्रकार के भेदभाव, समान नागरिक अधिकार तथा समाज में समान प्रतिष्ठा की व्यवस्था है । यह भारतीय संस्कृति और परम्परा के अनुरूप ही है । इसलिए जब संयुक्त राष्ट्र संघ में वर्ष 1981 का विकलांगों/अपंगों के सम्बन्ध में प्रस्ताव रखा गया तो भारत ने सहर्ष उस पर हस्ताक्षर कर इस अभियान में भाग लेना स्वीकार किया । इस वर्ष का मुख्य उद्देश्य है, विकलांगों/अपंगों को समाज में समानता तथा पूर्ण भागीदारी का स्थान दिलाना ।

विकलांग व्यक्तियों को दो श्रेणियों में रखा जा सकता है : 1. मानसिक रूप से विकलांग 2. शारीरिक रूप से विकलांग । मानसिक रूप से विकलांगों में कुछ तो होते हैं, जिनकी मानसिक विकृति का पता चिकित्सा परीक्षण से लग सकता है । इनकी संख्या प्रति हजार लगभग 23 व्यक्ति होती है । अन्य लोगों की सूचना केवल परिवार के मुखिया की रिपोर्ट से ही मिल सकती है । भारत में लगभग एक करोड़ [illegible] लाख व्यक्ति मानसिक रूप से विकलांग हैं ।

जन्म से किसी में अंग विकृति, युद्ध में हाथ-पैर या शरीर के अंग या किसी भाग के कटने या विकृत होने, प्राकृतिक प्रकोप जैसे बचपन में पोलियो, दुर्घटनाग्रस्त आदि के कारण, कुछ लोग शारीरिक रूप से विकलांग हो जाते हैं । इनमें सबसे अधिक संख्या संभवतः दृष्टिहीन विकलांगों की है । भारत में इनकी संख्या लगभग 50 लाख है । लगभग 5 करोड़ व्यक्ति कुष्ठ विकलांग हैं, जिनमें 50 लाख दृष्टिहीन, 15 लाख बधिर, 40 लाख शारीरिक रूप से तथा 20 लाख मानसिक रूप से अपंग हैं । लगभग 3 करोड़ 50 लाख व्यक्ति पूर्ण या आंशिक रूप से बधिर हैं ।

इन विकलांग या अपंग व्यक्तियों की सहायता तथा पुनर्वास हेतु कई योजनाएं बनीं । कई संस्थाएं इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं । मदर टेरेसा और सुश्री सरला देवी जैसी कई निष्ठावान तथा कर्मठ प्रतिभाओं ने अपना जीवन ही इनकी सेवार्थ समर्पित कर दिया है । ऐसे व्यक्तियों की आर्थिक एवं सामाजिक सहायतार्थ केन्द्रों में अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता रहा है ।

वर्ष 1978 में भारत सरकार ने शारीरिक रूप से बाधित लोगों के लिए विभिन्न रोजगारों में 3 प्रतिशत आरक्षण की भी व्यवस्था की थी । उसके अन्तर्गत काफी लोगों को रोजगार भी मिले । रेलवे में तो यह आरक्षण 15 प्रतिशत तक बढ़ा दिया गया है । कुछ रेल वर्कशापों में सर्वेक्षण भी किया गया है ताकि ऐसी पद-श्रेणियां बढ़ाई जा सकें जिनमें विकलांग व्यक्ति अधिकाधिक लगाए जा सकते हैं । कुछ निर्धारित पद-श्रेणियों की सूची सभी रेलवे कार्यालयों को भेज दी गई है तथा यह भी निर्देश दिया गया है कि विकलांग अभ्यर्थियों के आवेदकों पर बिना किसी विलम्ब निर्णय लिए जाएं । समाज कल्याण मंत्रालय में एक उच्च स्तरीय समिति विभिन्न विभागों तथा कार्यक्षेत्रों में ऐसी पद-श्रेणियों की सूची बना रही है जिस पर विकलांग व्यक्तियों की नियुक्ति को प्राथमिकता दी जा सके । ग्रामीण क्षेत्रों में उपयोगी काम धंधों का भी सर्वेक्षण किया जा रहा है, ताकि उनमें से ऐसे धंधों की सूची बनाई जा सके जिनमें विकलांग व्यक्तियों को अधिक स्वावलम्बी बनाने हेतु सहायता दी जाए । इससे शारीरिक रूप से बाधित व्यक्यिों के सामाजिक पुनर्स्थापन में काफी प्रगति होगी । साथ ही, वर्ष 1981 के उद्देश्य के अनुरूप तथा विकलांगों में नव चेतना का सम्मान करते हुए हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि यह आरक्षण उन्हें तभी तक मान्य है जब तक वे स्वयं स्वावलम्बी या आत्मनिर्भर नहीं बन जाते । उन्हें सनातन रूप में मिलता यह आरक्षण भी उसी दया-भाव का बिम्ब लगेगा, जिससे उनमें हीन-बोध उत्पन्न होता रहा है ।

इस हीन-बोधता से उन्हें उबारना तथा समाज की उनके प्रति परम्परागत उदासीनता को दूर करना ही तो इस वर्ष का उद्देश्य है । तभी हम 'विकलांगों के लिए समाज में समानता पूर्ण भागीदारी' के अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकेंगे ।

विकलांगों की आय पर आयकर में भी छूट की व्यवस्था रखी गयी थी । पिछले बजट के अवसर पर नेशनल फेडरेशन आफ दि ब्लाइंड के सुझाव पर एक और महत्वपूर्ण छूट दी गई है । आयकर में विकलांगों की आय पर छूट भी बढ़ा दी गई है और विकलांगों के पुनर्वास की अवस्था में औद्योगिक तथा व्यावसायिक संस्थाओं को उन्हें दिए जाने वाले वेतन के अनुपात में आयकर-छूट की व्यवस्था है । इससे उन्हें ऐसे व्यक्तियों की नियुक्ति आरक्षण-व्यवस्था से भी अधिक संख्या में करने का प्रोत्साहन मिलेगा । इसका दोहरा लाभ यह है कि अधिकाधिक संख्या में विकलांगों को रोजगार मिलने से उनमें आत्मविश्वास तथा स्वावलम्बी होने का आत्मगौरव जाग्रत होगा, और समाज को उनकी उपयोगिता देखते हुए उनके प्रति अपनी उदासीनता के स्थान पर सद्भाव की भावना बनेगी । अन्य वर्गों के साथ सद्भाव तथा समानता का वातावरण बन जाने पर विकलांगों को समाज में उनका सही स्थान भी प्राप्त होगा ।

वर्ष 1981 में ऐसे ही कुछ ठोस कार्यक्रमों की अपेक्षा की जा रही है जिनमें ऐसा वातावरण शीघ्र बने और उसमें हमारी संविधान में व्यक्त आस्था और परम्परागत संस्कृति का निर्वाह होगा ।☐

ग्रामीणों के स्वास्थ्य सुधार की समस्या

✳ विमला उपाध्याय

भारत गांवों का देश है। यहां के 85 प्रतिशत लोग गांवों में रहते हैं। अतएव देश के समग्र विकास के लिए गांवों के विकास की जरूरत है। ग्रामीण विकास की मुख्य समस्या उनके स्वास्थ्य सुधार की है। शरीर यंत्र बिगड़ जाने से अथवा उसमें किसी प्रकार की अनियमितता आने से जीना दूभर हो जाता है। गांवों के अधिकांश लोग मुख्यतः श्रम पर निर्भर करते हैं। श्रम ही उनकी रोजी-रोटी का आधार है। भारत में 20 प्रतिशत निम्न मध्यम किसान हैं, जिनके पास 18 से 50 बीघे तक जमीन है, 40 प्रतिशत मजदूर हैं, जिनके पास 2 बीघे से 10 बीघे तक जमीन है। 20 प्रतिशत भूमिहीन मजदूर हैं। इस प्रकार 80 प्रतिशत लोगों की जीविका का जरिया खेती ही है। उनमें खेती से सीधा संपर्क रखना पड़ता है। उनके लिए दिन-रात खटना पड़ता है। ऐसी हालत में उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं रहे, तो ग्रामीण विकास की धारा अवरुद्ध हो जाएगी। अतएव ग्रामीणों की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिए।

ग्रामीण आबादी का 85-90 प्रतिशत गरीबी रेखा के नीचे गुजर कर रहा है, जिसकी सालाना आमदनी 1500 रु० से 3000 रु० के बीच है। इस आय वर्ग के लोगों को औसतन 5 से 10 सदस्यों के परिवार का भरण-पोषण करना पड़ता है। ऐसी हालत में उनके पेट के गड्ढे किसी प्रकार खाद्य अखाद्य से भर जाते हैं। वे जीवित हैं—इतना ही पर्याप्त हैं। शुक्र खुदा का है कि इस विषम परिस्थिति में भी वे अपने और राष्ट्र के कल्याण के लिए जूझ रहे हैं। बढ़ती आबादी का भार कम जानलेवा समस्या नहीं है। इस पर नियंत्रण पाने के लिए परिवार नियोजन योजना कारगर कदम उठा रही है। इसकी शाखाएं गांव गांव तक फैल गई हैं। परिवार नियोजन सेवाएं द्वार-द्वार तक पहुंच गई हैं, परन्तु युगों से पड़े प्राचीन संस्कार, रूढ़ियां, अज्ञानता, अशिक्षा के कारण वे इससे लाभ नहीं उठा पाते हैं। कभी कहते हैं कि वेदों के अनुसार भ्रूणहत्या पाप है और कभी आने वाले को रोकने का जोखिम उठाने से डरते हैं। नियोजन केन्द्रों से गोली, डायफाम, जेली, निरोध आदि उपलब्ध भी हो गए, तो प्रमादवश अज्ञानता से उनके उपयोग की ओर लापरवाही बरती जाती है। फलतः परिवार साल-दर-साल बढ़ता जाता है। सीमित साधनों पर दबाव बढ़ता है, प्रति व्यक्ति भोजन में कटौती होती है, पोषक तत्वों में कमी आती है और स्वास्थ्य बिगड़ता चला जाता है।

गांवों में बाबा आदम के जमाने से भोजन बनाने की परम्परा चली आ रही है। उसके चलते नुकसान जो हो, पर उसमें बदलाव की बात नहीं सोची जाती है। हरी साग सब्जी, मछली, मास आदि तेल, घी में इतना भून दिया जाता है (भले ही वह साल में एक दो बार ही मिले), उसमें मिर्च-मसालों का इतना प्रयोग होता है कि उसके पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं। उससे जीभ को क्षणिक स्वाद भले ही मिले, शरीर को पोषण नहीं मिल पाता है। वे नहीं जानते कि अंकुरा मूंग, गेहूं के चोकर, मौसमी फल (अमरूद, ककड़ी, पपीता, शरीफा, खीरा, आम, नींबू आदि), धनिये पत्ते की चटनी, मूली आदि में काफी विटामिन तथा अन्य पोषक तत्व होते हैं। नतीजा यह होता है कि इन उपलब्ध चीजों का भी वे स्वास्थ्य के लिए उपयोग नहीं कर पाते हैं। शहरी हवा लगने के कारण वे भी सुविधा जीवी होते जा रहे हैं और अपना स्वास्थ्य खो रहे हैं। प्रकृति से उनका नाता टूट रहा है और वे रोग के चंगुल में फंसते जा रहे हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार गांवों की 85 हजार महिलाएं (गर्भवती) कुपोषण और हल्की चोटों की उपेक्षा के कारण प्रतिवर्ष मृत्यु की शिकार होती हैं। रजस्वला महिलाएं ऋतुकाल में सेनिटरी टावेल की जगह पुराने-गन्दे कपड़ों का व्यवहार करती हैं, जिससे अनेक यौन रोग उन्हें धर दबोचते हैं। हिस्टीरिया (उन्माद) को भूत-प्रेत का प्रभाव समझकर और चेचक, हैजा जैसे भयंकर रोगों को देवी का कोप मानकर झुठलाया जाता है। प्रतिवर्ष इसमें लाखों की जानें जाती हैं और कई विकलांग बनकर जिन्दगी का दुर्वल बोझ ढोने के लिए लाचार हो जाते हैं। उन्हें निकटस्थ मातृ-सदन और अस्पताल की भी जानकारी नहीं है और न ही वहां तक पहुंचने के लिए सड़क है और न सवारी उपलब्ध है। फलतः प्रसव कराने का काम गांव की दाई करती है जिसमें जच्चा-बच्चा दोनों पर मौत की तलवार लटकी रहती है।

बेतरतीब मकान और गंदी नालियां

गांवों में मकान बेतरतीब बने हुए हैं। एक के मकान का पिछवाड़ (पिछला भाग) दूसरे के मकान के सामने पड़ता है। अकसर लोग अपने बच्चों को मकान

के पीछे पाखाना करने भेज देते हैं। उनके घर का पानी वहां किसी गड्ढे में सड़ता रहता है। हजारों रोग वाहक मच्छर वहां पनपते रहते हैं। गली या सड़क के किनारे मल त्यागने का पुराना रिवाज है। उस पर जगह-जगह मोरियों का सड़ा हुआ बहता पानी, न नाली की व्यवस्था और न किसी कीट नाशक के छिड़काव का इन्तजाम। गांधी जी के सपनों का गांव, रोगों को खुला निमंत्रण देता है। अधिकांश कुएं कच्चे हैं, जिनकी मद तक कच्ची होती है। फलतः आस-पास का गन्दा पानी कुएं में गिरकर फिर से पीने में काम आता है। अधिकांश घरों में खिड़कियां नहीं होती हैं। एक दो रोशनदान हैं भी तो जाड़े में पुआल या चिथड़ों से बन्द कर दिए जाते हैं। भीतर गर्मी देने के लिए अंगीठी जलती रहती है और किरासन तेल का चिराग जलता रहता है। प्रति वर्ष इस दमघोंटू वातावरण में अनेक लोग मौत के शिकार होते हैं। स्त्रियां दिन-रात घूंघट में रहती हैं, घरों में पड़ी रहती हैं। न वे सूर्य की रोशनी से विटामिन ले पाती हैं और न शुद्ध हवा से आक्सीजन। उसकी अपेक्षा खेतों में काम करने वाली मजदूर स्त्रियों का स्वास्थ्य बेहतर है।

समस्याओं का समाधान

सवालों की लम्बी लगी है कतार चारों ओर। मसीहा की तरह सलीब कन्धे पर लेकर आगे आना होगा, तभी समस्याएं सुलझेंगी। अपेक्षा है गांवों के व्यक्ति आय की वृद्धि करने, कृषि पर से जन-संख्या के दबाव को कम करने और अज्ञानता-अशिक्षा के अन्धकार में सोई पीढ़ी को नई रोशनी में लाने की। इसके लिए पहला उपाय है कृषि को पेशे और आजीविका के साधन से ऊपर उठाकर उद्योग का दर्जा दिया जाए। उन्नत साधनों, वैज्ञानिक और तकनीकी उपकरणों द्वारा कृषि विकास के अनुमान्य लक्ष्य तक पहुंचा जाए। इससे प्रति व्यक्ति का कल्याण होगा। भरपेट भोजन मिलेगा—तभी अच्छे स्वास्थ्य के लिए सोचा जा सकेगा।

दूसरा उपाय है परिवार नियोजन केन्द्रों, मात एवं शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों तथा सामूहिक स्वास्थ्य स्वयं सेवकों की यथेष्ट सहायता लेना। इनके द्वारा पोषण और स्वास्थ्य की अपेक्षित शिक्षा दी जाती है। राष्ट्रीय पोषण संस्थान एवं केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो इस सम्बन्ध में समय-समय पर पंफलेट, किताबें, विवरण प्रकाशित करते हैं। इस पर आकाशवाणी और दूरदर्शन केन्द्रों से विचार विमर्श होता है, वार्ताएं प्रसारित की जाती हैं। भारतीय आयुर्वैज्ञानिक शोध परिषद लोगों के भोजन सम्बन्धी सर्वेक्षण कर रहा है। एफ० ए० ओ० ने 1972-74 के भोजन सर्वेक्षण की प्रकाशित रिपोर्ट (1977 में प्रकाशित) में चिन्ता व्यक्त की है कि भारत में प्रति व्यक्ति कैलोरी की खपत 1970 है, जो अन्य देशों-अफगानिस्तान (2000), बर्मा (2131), बंगला देश (1949), नेपाल (2025), पाकिस्तान (2132) की तुलना में काफी कम है। केवल बंगला देश का आंकड़ा ही भारत से कम है, अन्य देश भारत से काफी आगे हैं। इसे ऊंचा उठाने के लिए सभी दिशाओं से प्रयत्न किया जाना चाहिए। पोषण तत्वों की पर्याप्तता और उसको उपलब्ध कराने के लिए प्रत्येक ग्रामवासी उत्तरदायी है और इसमें सरकार का सक्रिय योगदान भी अपेक्षित है।

वयस्क शिक्षा के लिए महिलाओं का भी एक मंच हो, जिसमें सामान्य शिक्षा के अलावा उन्हें स्वास्थ्य नियमों की साधारण जानकारी दी जाए। इसके साथ मातृ तथा शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों का पूर्ण समन्वयन होना चाहिए। उनके कर्मचारियों का यह कर्त्तव्य हो कि वे समय-समय पर इसी मंच से स्वास्थ्य के नियमों का ज्ञान दें तथा सरकार की ओर से मिलने वाली गोलियां आदि उन्हें उपलब्ध कराएं। इस काम के लिए गांव के प्रबुद्ध वर्ग, समाज सेवी और युवक वर्गों को सामने आना होगा। जन-जन में जागृति का मंत्र फूंकना होगा। प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक बनाना होगा। इसके लिए उनका संगठित दल गांवों के मकानों को तरीके से बसाने, मिट्टी की पक्की पाइप से नालियों को सुव्यवस्थित करने, श्रमदान तथा प्रखण्ड विकास कार्यालय के सहयोग द्वारा सड़कें बनाने, कुओं की मदों को पक्का करने आदि की दिशा में प्रयास करें तो स्वास्थ्य सुधर सकता है। गांव के मुखिया तथा दो अन्य प्रबुद्ध व्यक्तियों की समिति स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने के लिए ऐसे केन्द्रों और एजेंसियों से सम्पर्क स्थापित करती रहनी चाहिएं।

भारत सरकार का यह निर्णय सचमुच स्वागत योग्य है, जिसमें आधुनिक दवाइयों से युक्त देश के 106 मेडिकल कालेजों को ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने के लिए तीन-तीन प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों से जोड़ा गया है। प्रत्येक ऐसे कालेज को तीन भ्रमणशील अस्पताल आवंटित किए गए हैं। ऐसा प्रत्येक कालेज ग्रामीण स्वास्थ्य की उन्नति, भावी रोग, और महामारी से बचाव के लिए प्रयत्न तथा रोगों की चिकित्सा के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी होगा। ऐसी घोषणा श्री निहाल सिंह के प्रश्नोत्तर में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री श्री शंकरानन्द ने 10 जुलाई, 1980 को संसद में की है। उन 318 भ्रमणशील अस्पतालों को संयुक्त राष्ट्र की ओर से अधुनातन भैषजिक सहायता उपलब्ध है। इस दिशा में इसकी आवश्यकता है कि ग्रामीण अपने अधिकार और कर्त्तव्य के प्रति सजग हो जाएं और सम्बन्धित चिकित्सकों और कर्मचारियों को यथेष्ट सहयोग देकर ग्रामीण स्वास्थ्य को समुन्नत करें।

स्वाधीनता की आत्मा शाश्वत जागरूकता में निवास करती है और बिना शाश्वत जागरूकता के न आत्म कल्याण किया जा सकता है और न राष्ट्र कल्याण के लिए सोचा जा सकता है। आजादी मिले कितने युग बीत गए, गंगा का कितना पानी बंगाल की खाड़ी में जा गिरा, पर गांवों की दिशा में अनुमानित लक्ष्य से बराबर कम सुधार हुआ है। इसका कारण है ग्रामीण स्वास्थ्य की बिगड़ती हालत और उनका जमाने की नई रोशनी से अलग अलग रहना। उत्तम स्वास्थ्य न केवल किसी व्यक्ति विशेष का धन है, वरन् यह राष्ट्र का धन है, जिसके लिए सबका सहयोग सदा वांछनीय है। ☐

गेहूं का वसूली मूल्य

एक अध्ययन

आर० सी० भटनागर * टी० आर सिंह

जुलाई 1957 में नियुक्त की गई खाद्यान्न जांच समिति की सिफारिशों के आधार पर किसानों तथा उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा हेतु सरकार ने दो महत्वपूर्ण कदम उठाए :

(1) जनवरी 1965 में 'कृषि मूल्य आयोग' का गठन किया गया । यह आयोग महत्वपूर्ण खाद्यान तथा व्यापारिक फसलों की मूल्य नीति के संबंध में सरकार को परामर्श देता है और प्रति-वर्ष खरीफ तथा रबी की फसलों के लिए न्यूनतम वसूली मूल्यों की सिफारिश करता है ताकि यदि खुले बाजार में खाद्यान्न कीमतें घोषित मूल्यों से कम होने की प्रवृति दिखाएं तो किसान वसूली मूल्यों पर अपनी उपज सरकार को बेचकर बाजारी गिरावट की हानि से बच सकें ।

(2) जनवरी 1965 में ही एक 'भारतीय खाद्य निगम' की स्थापना की गई । यह निगम वसूली मूल्यों पर किसानों की उपज को खरीदकर उसके संग्रह की व्यवस्था करता है तथा सस्ते सरकारी गल्ले की दुकानों द्वारा उसे उचित मूल्यों पर बेचकर उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करता है ।

स्पष्ट है कि सरकार द्वारा उठाए गए ये कदम एक ओर किसानों को मूल्य गिरावट की हानि से बचाते हैं और दूसरी ओर उपभोक्ताओं को मूल्य वृद्धि से सुरक्षा प्रदान करते हैं परन्तु यदि हम कृषि सुधार की योजनाओं को साकार करना चाहते हैं तो केवल यह आवश्यक नहीं कि किसानों को मूल्य गिरावट की हानि से बचाया जाए बल्कि यह भी आवश्यक है कि उन्हें प्राप्त होने वाले दाम लाभ--जन्य हों, उन्हें प्रोत्साहन मिले और वह कृषि क्रियाओं में एक व्यावसायिक दृष्टिकोण का निर्माण कर सकें ।

इस लेख में इस बात की जांच करने का प्रयत्न किया गया है कि आयोग द्वारा प्रस्तावित और सरकार द्वारा स्वीकृत 1981 के लिए गेहूं वसूली मूल्य कहां तक व्यावसायिक दृष्टिकोण का निर्माण करने में सहायक हो सकते हैं ।

इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की दृष्टि से उत्तर प्रदेश में सहारनपुर जनपद की रुड़की तहसील के एक प्रगतिशील ग्राम 'थीथकी', को चुना गया ताकि यह मालूम किया जा सके कि गेहूं की फसल को पैदा करने में किसान की प्रति बीघा औसत लागत क्या रहती है ? प्रति बीघा उत्पादकता का स्तर क्या है ? यह उत्पादकता 1981 के लिए घोषित रु० 130/- प्रति क्विन्टल की दर पर कितनी आय का आधार प्रस्तुत करती है तथा खर्च निकालने के पश्चात् किसान को औसतन कितनी बचत प्राप्त होती है ?

ग्राम 'थीथकी' रुड़की से दक्षिण की दिशा में पांच मील की दूरी पर स्थित है । यहां की भूमि अत्यधिक उपजाऊ है तथा सिंचाई की सुविधाओं का यहां कोई अभाव नहीं है । 1908 की जनसंख्या के इस गांव में पचास से अधिक ट्रैक्टर हैं तथा अधिकांश किसानों के पास पच्चीस बीघे अथवा इस से बड़े आकार की जोतें उपलब्ध हैं। यहां के ग्राम प्रधान एक सुशिक्षित और जागरूक व्यवित हैं । कृषि उनका पैतृक व्यवसाय है और उन्हें इस बात का गर्व है कि टोकियो विश्वविद्यालय के एक शोध-कर्त्ता ने उनके गांव को अपने शोध कार्य के लिए चुना, उनके आतिथ्य को स्वीकार किया तथा उनका ग्राम अन्तर्राष्ट्रीय आकर्षण का केन्द्र बन सका । कृषि अर्थशास्त्र की व्यवहारिक जान कारी तथा उनके सन्तुलित व उदार दृष्टिकोण के कारण ग्राम प्रधान को ही वांछित जानकारी को प्राप्त करने का स्रोत बनाया गया ।

उन्होंने इस बात को स्वीकार किया कि देश की प्रगति के साथ-साथ खेती क्रियाओं का स्वरूप भी निरंतर बदल रहा है । उनके ग्राम निवासी भी इन परिवर्तनों से अछूते नहीं रहे । खेती में राष्ट्रीय बैंकों का योगदान भी बढ़ता जा रहा है । परन्तु उन्होंने इस बात पर बल दिया कि 1981 के लिए जो 130.00 रू० प्रति क्विंटल के गेहूं वसूली मूल्य सरकार द्वारा घोषित किए गए हैं वह किसानों के लिए पर्याप्त उत्साह का आधार प्रस्तुत नहीं करते । प्रति बीघा आय, व्यय तथा बचत का ब्यौरा जो उनके द्वारा दिया गया इस प्रकार है :—

I. **प्रति बीघा उत्पादन लागत** (गेहूं की बौनी जाति)	
1. **भूमि जोतने के लिए :**	रुपये
(अ) 2 बार ट्रैक्टर द्वारा	28-00
(ब) 2 बार हालदार द्वारा	28-00
2. **बीज :**	
6 किलोग्राम (पन्त नगर)	
दर 2-50 रु० प्रति किलो	15-00
3. **देशी खाद :**	
2 बुग्गी दर 20.00 रु० प्रति बुग्गी	40.00
4. **रासायनिक खाद :**	
(अ) 10 किलो डाई, दर 2.50, रु० प्रति किलो	25.00
(ब) 15 किलो यूरिया (तीन बार में) दर 2.00 रु० प्रति किलो	30.00
(स) 5 किलो पौटाश, दर 2.00 रु० प्रति किलो	10.00
5. **सिंचाई :** (ट्यूबवैल द्वारा)	
5 बार 8.00 रु० प्रति घन्टा	40.00
6. **कीट–नाशक दवाईयाँ :**	
(अ) $1\frac{1}{2}$ किलो बी० एच० सी०	
(ब) डाइथेन–जैड–78 का छिड़काव	
(स) एण्डरीन	12.00
7. **मजदूरी :**	
(अ) बुआई : 2 श्रमिक एक दिन दर 8.00 रु०	16.00
(ब) निराई: 1 श्रमिक दो दिन दर 8.00 रु०	16.00
(स) कटाई : 2 श्रमिक एक दिन दर 8.00 रु०	16.00
(द) ढुलाई : 1 श्रमिक एक दिन दर 8.00 रु०	8.00
(क) थ्रैशिंग : $2\frac{1}{2}$ क्विन्टल गेहूं)	24.00
(ख) गेहूं और भूसा उठाने के लिए 1 श्रमिक एक दिन	8.00
कुल योग	316.00
II. उपज एवं आय :	
1. $2\frac{1}{2}$ क्विटल गेहूं (1981 में 130.00 रु० की दर पर)	325.00
2. भूसा $2\frac{1}{2}$ क्विटल (15.00 रु० प्रति क्विटल की दर से)	37.50
कुल आय	362.50
कुल लागत	316.00
शुद्ध लाभ	46.50

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि किसान को लगभग 45.00 रु० प्रति बीघा बचत प्राप्त होगी और 25 बीघे औसत जोत के स्वामी को 45×25=1125/- रु० की कुल आय प्राप्त हो सकेगी जो लगभग तीन से चार माह की अथक मेहनत और प्रयत्नों का परिणाम कही जा सकती है। उल्लखेनीय है कि उपरोक्त अनुमान में किसान की अपनी मेहनत, परिवार के सदस्यों का योगदान तथा मवेशियों के सहयोग का मूल्य शामिल नहीं किया गया। साथ ही यदि आकस्मिक विपत्तियों से उत्पन्न जोखिम के मूल्य को भी जोड़ लिया जाए तो आय तथा व्यय दोनों बराबर हो जाएंगे और किसान की लाभ की प्रेरणा लुप्त होती दिखाई देगी।

जब ग्राम प्रधान से यही प्रश्न किया गया कि उत्साहवर्धक लाभ के अभाव में गांव के किसान खेती के व्यवसाय में दिलचस्पी कैसे ले पाते हैं तो वह बोले "क्या आप जानते हैं कि मांस न लगा होने पर भी कुत्ता हड्डी क्यों चबाता है ? " अपनी बात जारी रखते हुऐ वह आगे बोले "यह हड्डी कुत्ते के मसूड़ों में घाव करती है, उनसे खून रिसने लगता है परन्तु कुत्ता रक्त को हड्डी का ही अंश मानकर आनन्द लेता रहता है। इसी प्रकार हम भी जानते हैं कि कृषि उत्पादन वसूली मूल्यों पर लाभ का आधार प्रस्तुत नहीं करता परन्तु हम कुछ न पाकर भी इसका आनन्द लेते हैं।" ग्राम प्रधान के स्पष्टीकरण ने केवल, 'मौलिक कृषिवाद' के विचार की पुष्टि मात्र की थी।

यदि हम किसानों के लिए गेहूं के उत्पादन में उत्साहवर्धक लाभ का आधार तैयार करना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि उसकी उत्पादन लागत को कम किया जाए। अच्छे किस्म के बीजों के उत्पादन को बढ़ा कर उन्हें सस्ती दरों पर किसानों को उपलब्ध किया जाना चाहिए। सिंचाई के लिए सरकारी ट्यूबवैलों से मिलने वाले पानी की दरों में कमी की जानी चाहिए तथा रासायनिक खाद्य के राष्ट्रीय उत्पादन को बढ़ाकर उसकी दरों में कमी के सतत् प्रयास किए जाने चाहिए। वसूली मूल्यों की वृद्धि से समस्या का समाधान नहीं हो सकता। अत: समस्त प्रयत्न लागतों की कमी और प्रति बीघा उत्पादन वृद्धि की दिशा में आयोजित किए जाने चाहिए। □

प्रवक्ता

अर्थशास्त्र एवं समाजशास्त्र विभाग,

वी० एस० एम० (पोस्ट ग्रेजुएट) कालेज, रुड़की,

सहारनपुर (उ० प्र०)

तेल की हर बूंद कीमती है, इसे बचाइये !

ग्रामीण विकास में आधुनिकतम प्रौद्योगिकी

प्रदीप चतुर्वेदी

यदि भारत सरकार द्वारा ग्रामीण विकास में लगे हुए धन की स्कीमों पर ध्यान दिया जाए तो पता चलेगा कि बहुत सी ऐसी स्कीमें हैं जिनको ग्रामीण क्षेत्रों से ही चलाया जाता है और वहां के लोगों ने ही सरकार से धन प्राप्त किया है। ऐसी स्कीम शहर में बैठकर बनाई गई स्कीम से कहीं बेहतर होती है। शहर में बैठकर जो स्कीमें बनती हैं, उन में यह अवश्य है कि उन स्कीमों के लिए ढांचे की रूपरेखाएं सही प्रकार से बन जाती हैं। परन्तु वे स्कीमें ग्रामीण क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं या नहीं इस पर कम ही ध्यान दिया जाता है।

कोटा स्थित परमाणु ऊर्जा बिजलीघर से राजस्थान की कुल संस्थापित क्षमता कर 60 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। उस बिजली से ऐसे धंधे चलेंगे जो काफी मात्रा में ग्रामीण क्षेत्रों में फैले होंगे।

अन्तरिक्ष विज्ञान पर जो कुछ खर्च किया जा रहा है उसका शान्ति पूर्ण कार्यों में सबसे प्रमुख योगदान दूरसंचार के क्षेत्र में ही है। 36000 किलोमीटर की ऊंचाई पर जी०ओ० स्टेशनरी कक्षा में स्थापित उपग्रह के माध्यम से देशभर में प्रसारण सुने जा सकते हैं। दूरदर्शन के कार्यक्रम भी देखे जा सकते हैं। जब यह साधन उपलब्ध हो जाएंगे तो गांवों में बैठे किसानों को तथा अन्य ग्रामवासियों को कृषि, चिकित्सा, उद्योग इत्यादि कार्यक्रमों का प्रशिक्षण आसानी से दिया जा सकेगा। जिस तरह से आज के युग में बच्चों को दूरदर्शन की सहायता से बहुत-सी बातों का देखकर ज्ञान हो रहा है, जो आज से 20 वर्ष पहले के बच्चों के ज्ञान-उपलब्धि के साधनों से कहीं ऊंचे स्तर का है, इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र के व्यक्तियों को दूरदर्शन पर देखने के बाद बहुत-सी बातें आसानी से समझ में आएंगी। उनका ज्ञान भी बढ़ेगा, देश की पैदावार बढ़ेगी, विकास में भी मदद मिलेगी तथा औद्योगिक उत्पादन दूरदराज गांव में भी बढ़ेगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के लिए सबसे बड़ी बाधा ऊर्जा की होती है। अभी तक ग्रामीण विद्युतीकरण निगम के भरसक प्रयासों के बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों का विद्युतीकरण पूर्णरूप से अभी बहुत दूर की बात है। जो क्षेत्र दूर-दराज हैं और जिनकी जनसंख्या भी कम है वहां विद्युतीकरण के लिए खर्चा इतना अधिक बैठता है कि उसकी बात ही नहीं सोची जा सकती। ऊर्जा के वैकल्पिक साधनों पर जोर देने के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा के नए साधन उपलब्ध हो सकेंगे। 1978 में सौर ऊर्जा पर अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन दिल्ली में किया गया था। तब पहली बार अपने देश में इन वैकल्पिक साधनों की तरफ ध्यान आकर्षित हुआ। वैसे तो नैशनल फिजीकल लेबोरेटरी (पूसा) में खिलौनों के तौर पर आधी अश्व-शक्ति की मोटर का प्रयोग छठे दशक में किया गया था। उसके विकास पर बाद में कोई अधिक ध्यान नहीं दिया गया। परन्तु अब इस पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

सौर ऊर्जा से उत्पन्न विद्युत से आप कोई भी कार्य कर सकते हैं। दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए तो यह बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगी। अभी ग्रामीण क्षेत्रों में हालत यह है कि शाम को अंधेरा होने पर सुबह रोशनी होने तक कुछ काम ही नहीं हो सकता। भारत की 85 प्रतिशत जनता बेकार पड़ी रहती है। यदि इन क्षेत्रों में घरों को सिर्फ 40 वाल्ट जलाने के लायक बिजली उपलब्ध हो जाए तो वे उससे घर में रोशनी की व्यवस्था ही नहीं कर सकते हैं, बल्कि छोटे - मोटे दस्तकारी, हस्तकला, यहां तक कि जरी जैसे काम का भी विकास कर सकते हैं। यदि ऐसी स्थिति हो जाए तो यह आम आदमी भी सोच सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में क्या परिवर्तन आ सकते हैं। देश की हालत भी सुधर जाएगी।

वैकल्पिक ऊर्जा-साधनों में दूसरा, साधन, जो कि ग्रामीण क्षेत्रों के लिए उपयोगी है, वह है गोबर गैस। गोबर गैस से अभी तक बहुत कम किसान या ग्रामवासी फायदा उठा सके हैं। बल्कि दूसरी तरफ चीन में लाखों की तादाद में ये गैस-संयंत्र लगे हुए हैं। भारत में जो विशेष डिजाइन खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग ने विकसित की उसमें गैस बनाना मुख्य उद्देश्य है और उससे प्राप्त कम्पोस्ट खाद एक अतिरिक्त उपलब्धि है। चीन में जो संयंत्र बनाया गया है, उसमें कम्पोस्ट खाद बनाना मुख्य उद्देश्य है और गैस एक अतिरिक्त उपलिब्ध। इससे यह अवश्य है कि गैस उतनी क्षमता में उपलब्ध नहीं हो पाती, जितनी कि भारतीय डिजाइन में। परन्तु चीन के डिजाइन में संयंत्र की लागत बहुत कम बैठती है और ग्रामवासी स्वयं ही उसे बना सकते हैं और उसका रख-रखाव भी स्वयं ही कर सकते हैं। आजकल भारत सरकार सौर-ऊर्जा के उपयोग के साथ गोबर गैस-संयंत्र पर भी काफी जोर-शोर से काम चला रही है, जिससे खाद की समस्या भी सुलझेगी और इंधन की भी। पेट्रोल की बढ़ती कीमतों के साथ यह बहुत बड़ी मदद राष्ट्रहित में होगी।

भारत सरकार की जो विभिन्न योजनाएं हैं और जिस प्रकार से धन राशि उपलब्ध कराई जा रही है, उससे यह स्पष्ट है कि सरकार की नीति ग्रामीण विकास की ओर उन्मुख हुई है। यह विकास बहुत द्रुत गति से किया जाएगा, तभी उसके फायदे किसानों तक पहुंच सकेंगे। इस सब के लिए आवश्यक है कि आधुनिक प्रौद्योगिकी का पूर्णरूपेण उपयोग किया जाए। उन कुछ नारेबाजों से सावधान भी रहा जाए जो यह कहते हैं कि आधुनिक प्रौद्योगिकी ही ग्रामीण विकास की सबसे बड़ी दुश्मन है। ☐

छोटे किसानों की सेवा में राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण ब्यूरो

*

आर० वी० खांडेकर

कृषि कार्यक्रम की सफलता मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर करती है कि किसानों को अत्याधुनिक कृषि पद्धतियों और प्रौद्योगिकी के बारे में कितनी जानकारी दी जाती है और वे इन्हें कितना अपनाते हैं। आज खेती एक कौशलपूर्ण व्यवसाय हो गया है, इसलिए किसानों विशेषकर छोटे एवं सीमांत किसानों को इसकी जानकारी होना बहुत जरूरी है ताकि वे सीमित संसाधनों के होते हुए भी अपने जीवन-निर्वाह के लिए पर्याप्त कमा सकें और अपना जीवन स्तर उन्नत कर सकें।

महाराष्ट्र में मोंडा गांव के नामदेव अदमाने ने 1979 के रबी मौसम के दौरान खेती की विकसित पद्धतियां अपना कर प्रति हेक्टेयर में 20 क्विंटल गेहूं की पैदावार निकाली जिसमें इससे पहले वह खेती के परम्परागत तौर-तरीकों से केवल आठ क्विंटल ही प्राप्त करता था। 1980 के खरीफ मौसम में उसकी कपास की पैदावार भी 15 क्विंटल से बढ़कर 23 क्विंटल प्रति हेक्टेयर हो गई। नामदेव और नागपुर तथा वर्धा के आस-पास के गांवों में छोटे किसानों ने यह उपलब्धि नागपुर में मिट्टी सर्वेक्षण और भूमि उपयोग नियोजन के राष्ट्रीय ब्यूरो के मार्गनिर्देश और उसके द्वारा दी गई सहायता के फलस्वरुप ही प्राप्त की।

आधुनिक युग में जिस तेजी से ज्ञान और सूचना का प्रसार हो रहा है उससे समाज का कोई वर्ग अछूता नहीं रह सकता और न ही वह विकास के बारे में, जो आज हमारे चारों ओर हो रहा है, अनभिज्ञ या उदासीन रह सकता है। इस मामले में कृषक समुदाय भी कोई अपवाद नहीं है। इसलिए किसानों को न केवल इन विकसित खेती के तरीकों के बारे में बताना आवश्यक है बल्कि उन्हें इस तरह प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि उनका अनुभव, ज्ञान और योग्यता का स्तर विकसित देशों में प्रचलित खेती के आधुनिक स्तर तक पहुंच सके। मिट्टी सर्वेक्षण और भूमि उपयोग नियोजन का राष्ट्रीय ब्यूरो इस उद्देश्य से किसानों को प्रशिक्षित कर रहा है। इस कार्य हेतु नागपुर और वर्धा के आस-पास के गांवों के सीमांत किसानों के आधा एकड़ भूमि के खण्डों का चुनाव किया गया है। वहां पर किसानों को मिट्टी संबंधी आधारभूत जानकारी और उत्पादकता बढ़ाने हेतु भूमि के समुचित उपयोग के बारे में सुझाव दिए जाते हैं।

खेती के कार्यक्रम

वर्ष 1979 के खरीफ के दौरान वर्धा जिले के सेवाग्राम, सुंकली, कोल्हापुर आदि गांवों के 25 किसानों को "प्रयोगशाला से खेत तक" कार्यक्रम को प्रत्यक्ष दिखाने के लिए चुना था। रबी मौसम के दौरान नागपुर के समीप मोंडा गांव के पांच किसानों ने भी विकसित प्रौद्योगिकी को अपना कर उसका प्रदर्शन किया। उन्होंने 1979-80 में रबी मौसम में गेहूं की फसल के बाद 1980 में खरीफ मौसम में कपास की एच-4 किस्म की पैदावार ली। आठ और किसानों ने कपास और ज्वार की फसल का प्रदर्शन किया। इसके साथ-साथ 1980 के खरीफ और 1980-81 के रबी मौसम में कपास, ज्वार और गेहूं की फसलों में उर्वरकों की मात्रा को सुनिश्चित करने हेतु अनुसंधान कार्यक्रम भी शुरू किए गए थे।

मृदा की विस्तृत सर्वेक्षण रिपोर्ट और मानचित्रों के आधार पर विभिन्न फसल-उगाने के लिए उपयुक्त मिट्टी का मूल्यांकन किया गया और विकसित किस्म के बीजों, उर्वरकों और पौधे संरक्षण जैसे महत्वपूर्ण निवेशों के बारे में सही समय पर किसानों को उपाय सुझाए। खेत को जुताई के लिए तैयार करने, बीज की मात्रा और पौधे लगाने, समय पर निराई-गुड़ाई करने तथा कृषि संबंधी अन्य आवश्यक कार्यों के बारे में विशेष ध्यान देने के लिए सुझाव दिए। प्रौद्योगिकी को अपनाने पर लागत में कमी करने और उनका कुशलतापूर्वक उपयोग करने को ध्यान में रखते हुए उर्वरकों और पौध संरक्षण के उपाय सुझाए गए।

हाथ कंगन को आरसी क्या

यह ब्यूरो मिट्टी की किस्म का मूल्यांकन करने और विशेष फसल के लिए उसकी उपयुक्तता, बीज बोते समय खुड्डों के बीच फासले को बनाए रखने, उर्वरकों के डालने की अवधि और उनकी मात्रा के बारे में जानकारी देने तथा समय पर कीटनाशक दवाई छिड़कने के बारे में बहुमूल्य मार्गनिर्देश किसानों को देता रहता है। ब्यूरो के कर्मचारियों द्वारा समय-समय पर मोंडा गांव के किसानों को स्वयं मिलकर मार्ग दर्शन करने का नतीजा अच्छा रहा। अन्य गांवों के किसानों ने भी इन प्रयोगों में भाग लेने की इच्छा दर्शाई। इससे उनकी उपज तो बढ़ी ही, उसकी किस्म भी बढ़िया थी। □

ग्राम विद्युतीकरण क्षेत्र में एक नया प्रयोग :

ग्राम विद्युत् सहकारी समितियां

रामसुन्दर शुक्ल

किसी भी देश के आर्थिक विकास में और खास तौर से समाज के असंगठित वर्गों को उत्पादन वृद्धि के उद्देश्य से संगठित करने में सहकारिता आन्दोलन की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पिछले वर्षों के दौरान देश में आर्थिक क्रियाकलापों के नए-नए क्षेत्रों में सहकारी समितियां गठित की गई हैं और उन्हें आशातीत सफलता मिली है। ग्राम विद्युत सहकारी समितियां भी ऐसी ही संस्था है। आज से कोई दस वर्ष पहले गांवों में तेजी से बिजली पहुंचाने और उनके आर्थिक उत्थान के लिए प्रयोग के तौर पर पांच ग्रामीण विद्युत् सहकारी समितियां गठित की गई थीं। इन्होंने अपने उद्देश्यों को पूरा करने में अभूतपूर्व सफलता पाई है। और इस तरह की और सहकारी समितियों के गठन का मार्ग प्रशस्त किया है।

शुरुआत

भारत में विद्युत् सहकारी समितियों का गठन हुए अभी बहुत दिन नहीं हुए हैं। 1940 में तत्कालीन बम्बई राज्य में कुछ विद्युत् सहकारी समितियां स्थापित करने की कोशिश की गई थी। हालांकि इनका उद्देश्य कुछ शहरी क्षेत्रों में घरेलू उपयोग के लिए बिजली सप्लाई करना मात्र था। गांवों को बिजली पहुंचाने और इनके आर्थिक विकास की गति तेज करने के उद्देश्य से गठित की जाने वाली विद्युत् सहकारी समितियां स्थापित करने की बात भारत में पहले पहल 1965 में सोची गई। उस वर्ष नवम्बर में राज्य बिजली बोर्डों के अध्यक्षों के एक सम्मेलन में सुझाव दिया गया कि प्रयोग के तौर पर हर राज्य में एक विद्युत् सहकारी समिति गठित की जाए जो गांवों को बिजली पहुंचाने के काम में राज्य बिजली बोर्ड की सहायता करे। इसके बाद अमरीका की एक संस्था "नेशनल रूरल इलेक्ट्रिक को-आपरेटिव एसोसियेशन" के कुछ विशेषज्ञों से भारत सरकार ने इस प्रकार की समितियों के गठन के बारे में अनुसंधान करने को कहा। इन विशेषज्ञों ने कई सिफारिशें कीं। इनके सुझावों के अनुसार आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक और उत्तर प्रदेश में एक-एक ग्राम विद्युत् सहकारी समिति प्रयोग के तौर पर 1969 में गठित की गई। भारत में ग्राम विद्युतीकरण के क्षेत्र में यह एक अभिनव प्रयोग था। इन विद्युत् सहकारी समितियों ने सम्बद्ध राज्य बिजली बोर्डों के साथ समझौते किए। समझौतों के अनुसार बोर्ड उन्हें एक निश्चित दर पर बिजली सप्लाई करता है। सहकारी समितियां अपने क्षेत्रों में बिजली सप्लाई की पूरी व्यवस्था करती हैं। वितरण तंत्र की देखभाल और रखरखाव, बिलों की वसूली, गांवों का विद्युतीकरण और क्षेत्र विकास की अन्य परियोजनाओं के लिए बिजली उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी इन्हीं समितियों की होती है।

उद्देश्य

गांवों में बिजली पहुंचाने के लिए हर राज्य के बिजली बोर्ड में विशेष विभाग हैं। प्रश्न हो सकता है इसके होते हुए ग्राम विद्युत् सहकारी समितियों की क्या जरूरत है? इस विषय पर काफी विचार हो चुका है। ग्राम विद्युतीकरण निगम के तत्वावधान में गठित पहली पांच सहकारी समितियों का कई संस्थाओं ने अध्ययन किया है। इन्होंने निष्कर्ष निकाला कि सहकारी समितियों का कामकाज सम्बद्ध राज्य बिजली बोर्ड के काम के मुकाबले उपभोक्ताओं की जरूरतों से ज्यादा मेल खाता है और उपभोक्ताओं को कुशल सेवाएं दे सकने में सक्षम है। देखा गया है कि इन सहकारी समितियों में उपभोक्ताओं का सक्रिय सहयोग होता है। इनसे क्षेत्र विकास में तेजी आती है। खर्च में किफायत होती है। उपभोक्ताओं को शिक्षित करने के कार्यक्रम अधिक प्रभावी ढंग से चलाए जा सकते हैं।

उपलब्धियां

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, पांचों अग्रगामी विद्युत् सहकारी समितियों की सफलताएं बहुत उत्साहवर्धक रही हैं। इन्होंने अपने लगभग एक दशक के कार्यकाल के दौरान अपने क्षेत्र के सभी गांवों को बिजली पहुंचा दी है। उच्च और निम्न प्रेषण लाइनों के निर्माण के क्षेत्र में इन समितियों ने क्रमश: 97 प्रतिशत और 104 प्रतिशत के बराबर काम किया है। उन्होंने सिंचाई के जितने पम्पसेटों को बिजली देने का लक्ष्य रखा था, उसके 110 प्रतिशत पम्पसेटों को बिजली पहुंचाई है। औद्योगिक और घरेलू/व्यावसायिक कनेक्शन देने की दिशा में लक्ष्य के 119 और 135 प्रतिशत के बराबर कार्य किया है। पांच समितियों ने कुल 70 हजार सेवाएं प्रदान करने का लक्ष्य रखा था लेकिन सितम्बर, 1980 तक ये कुल मिलाकर 86648 सेवाएं प्रदान कर चुकी थी। लक्ष्य के मुकाबले यह उपलब्धि 124 प्रतिशत बैठती है। जो एक रिकार्ड है।

नई समितियां

पांच प्रायोगिक समितियों की सफलता से प्रेरणा लेकर देश में अब तक 12 और ग्राम विद्युत् सहकारी समितियां गठित की जा चुकी हैं। इनमें से ग्यारह ने काम शुरू कर दिया है और बाकी एक भी जल्दी कार्यरत हो जाएगी। नई समितियों के नाम हैं—अनकपल्ली और रायाचोटी (आंध्र प्रदेश), पंधना, मनासा, मनावर और छतरपुर (मध्य प्रदेश), कुंभकोणम (तमिलनाडु), आठगढ़ (उड़ीसा) और सिंगुर-हरिपाल (पश्चिम बंगाल)। नव

गठित समितियों का काम भी उत्साहवर्धक रहा है। बाद में स्थापित समितियों में से कई अभी नई हैं। इनमें से पांच ने (अनकपल्ली, रायाचोटी, फतवाफुलवारी, कोटपुतली और पंधना) 1976-77 से काम शुरू किया। आठगढ़ और मनासा ने 1978-79 से और सांबा, मनावर और कुंभकोणम ने 1980 में काम शुरू किया। जिन सहकारी समितियों में काम शुरू हो चुका है उन्होंने कुल मिलाकर औसतन अपने क्षेत्र के 72 प्रतिशत गांवों में बिजली पहुंचा दी है। इन्होंने सिंचाई के पम्पसेटों को ऊर्जायित करने का 64 प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त कर लिया है। ट्रांसमिशन लाइनों के निर्माण और सर्विस कनेक्शन देने की दिशा में उत्साहवर्धक वृद्धि हुई है।

सदस्यता और पूंजी

जिन ग्राम विद्युत् सहकारी समितियों में काम शुरू हो चुका है उनकी सदस्य संख्या सितम्बर 1980 की यथास्थिति के अनुसार एक लाख 28 हजार थी। इनकी हिस्सा पूंजी कुल मिलाकर लगभग सात करोड़ रुपये तक पहुंच गई है।

ग्राम विद्युतीकरण निगम की भूमिका

देश में विद्युत् सहकारी समितियों को प्रोत्साहित करना तथा वित्तीय सहायता प्रदान करना ग्राम विद्युतीकरण निगम के उद्देश्यों में से एक रहा है। निगम सभी सत्रह ग्राम विद्युत् सहकारी समितियों को कुल मिलाकर लगभग 32 करोड़ रुपये की ऋण सहायता स्वीकृत कर चुका है। इसके अलावा, निगम 4.80 करोड़ रुपये राज्य सरकारों को इन समितियों की पूंजी के शेयर खरीदने के लिये मंजूर कर चुका है जिसका ब्यौरा इस प्रकार है :—

ग्राम विद्युत् सहकारी समितियों को ग्रा० वि० नि० की ऋण सहायता

(रुपये लाखों में)

क्रम सं०	नाम	स्वीकृत परियोजना ऋण	स्वीकृत शेयर पूंजी
1.	सिरसिला (आंध्र प्रदेश)	425.73	35.00
2.	हुकेरी (कर्नाटक)	109.40	10.00
3.	कोडिनार (गुजरात)	184.12	
4.	लखनऊ (उ०प्र०)	279.38	25.00
5.	मुलाप्रवर (महाराष्ट्र)	444.13	25.00
6.	अनकपल्ली (आंध्र प्रदेश)	116.780	35.00
7.	रायाचोटी (आंध्र प्रदेश)	126.780	35.00
8.	फतवा फुलवारी (बिहार)	12.10	
9.	कोटपुतली (राजस्थान)	121.035	35.00
10.	पंधना (मध्य प्रदेश)	155.090	35.00
11.	मनासा (मध्य प्रदेश)	165.700	35.00
12.	मनावर (मध्य प्रदेश)	174.560	35.00
13.	आठगढ़ (उड़ीसा)	79.158	35.00
14.	सांबा (जम्मू-कश्मीर)	146.150	35.00
15.	सिंगुर-हरिपाल (प० बंगाल)	100.608	35.00
16.	कुंभकोणम (तमिलनाडु)	148.120	35.00
17.	छतरपुर (मध्य प्रदेश)	208.080	35.00

वित्तीय सहायता के अलावा ग्राम विद्युतीकरण निगम इन समितियों का मार्गदर्शन करता है। वह राज्य सरकारों को इन समितियों पर रचनात्मक नियन्त्रण बनाए रखने में सहायता देता है।

विशेष कोष

सहकारी समितियों को दिए गए परियोजना ऋणों पर निगम ने ब्याज न लेने का भी फैसला किया है। शर्त यह है कि ब्याज की इस रकम को ये समितियां एक विशेष कोष में जमा कर दें। इस कोष को वे अपने क्षेत्रों में विभिन्न विकास कार्यों में लगा सकेंगी। इस निधि में जमा की गई सभी 12 समितियों की धनराशि पिछले वित्त वर्ष की समाप्ति तक दो करोड़ 90 लाख रुपये तक पहुंच गई थी।

संभावनाएं

ग्राम विद्युत् सहकारी समितियों की उपलब्धियों को ध्यान में रखते हुए हैदराबाद में हुए इन समितियों के अध्यक्षों तथा प्रबन्ध निदेशकों के सम्मेलन ने इस कार्यक्रम के विस्तार की सिफारिश की है। इसके अनुरूप ही ग्राम विद्युतीकरण निगम ने छठी योजनावधि के दौरान 30 ऐसी नई समितियां गठित करने का लक्ष्य रखा है। अनुमान है कि इस काम के लिये 70 करोड़ रुपये का प्रावधान रखना होगा। ☐

●

हमारी सम्पदा

हमारे वन

पशुओं की आकस्मिक मृत्यु

ऊषा बाला

बहुधा देखा गया है कि जब एकाएक बीमारी के कारण किसी पशु की मृत्यु हो जाती है तो सबसे पहला संदेह आप अपने पड़ोसी पर करते हैं। शायद कभी आपका उससे झगड़ा हो गया हो और बार-बार आप यही सोचते हैं कि उसी ने आपके पशु को विष दे दिया है, किन्तु इस प्रकार से अपने पड़ोसी पर सन्देह करना बहुत हद तक अनुचित है। इसके विपरीत आप अपने फार्म में इधर-उधर पड़े हुए द्रव्यों पर ही सरसरी नजर दौड़ाएं। संभव है कि इस सब का कारण वहीं मिल जाए। आइए, व्यर्थ में अपने पड़ोसी पर सन्देह न करके अपनी ही चीजों की ओर दृष्टि दौड़ाएं।

फसलों की रक्षा और कृषि उन्नति के वैज्ञानिक साधनों के विकास के साथ-साथ पशुओं के जीवन के लिए पग-पग पर खतरा उपस्थित रहता है। खेती के समस्त रासायनिक द्रव्य विषैले होने के कारण आधुनिक ढंग का प्रत्येक कृषि फार्म पशुओं के लिए विष का भंडार कहा जा सकता है खाद, रोगन, मर्करी में सने हुए बीज, चूहे आदि हानि पहुंचाने वाले जीव जन्तुओं को मारने वाली दवाएं, पौधों पर छिड़कने वाले कृमिनाशक द्रव्य व विषाक्त पौधे आदि सब विषैली वस्तुएं हैं। पुरानी बैटरी, जिसको बेकार समझ कर यों ही फेंक दिया जाता है अथवा सीसे के पाइप से जो हानि पशु को पहुंच सकती है, उसकी ओर हम कभी ध्यान ही नहीं देते। ये और इसी प्रकार के अन्य विषैले पदार्थ पशु की पहुंच में ही रखे रहते हैं और बहुधा हमारी अपनी ही असावधानी के कारण ये द्रव्य पशुओं के लिए घातक सिद्ध होते हैं।

रासायनिक खाद दो प्रकार से पशुओं के लिए मृत्यु का कारण बन सकती है। प्रथम तो इसकी सुगंध पशुओं को आकर्षित करती है, विशेष तौर पर जिन पशुओं को नमक नहीं मिलता, वे इन खादों की ओर शीघ्र आकर्षित हो जाते हैं। दूसरे पशु कुछ स्वभावतः कागज आदि खाने या चाटने के आदि होते हैं, जब कि खाद के खाली कागज या थैले में एक पशु का अंत करने के लिए पर्याप्त खाद बच रहती है।

नाइट्रेट खाद अमोनिया नाइट्रेट या सोडा नाइट्रेट की बहुत थोड़ी मात्रा ही पशु की मृत्यु का कारण हो सकती है। इसके खाने के पश्चात् पशु के पेट में एक ऐसा मिश्रण बन जाता है जो रक्त में मिलकर आक्सीजन गैस के फेफड़ों से सारे शरीर में फैलने में बाधा डालता है। पशु दम घुटने के कारण मर जाता है। आरम्भ में पशु जोर-जोर से सांस लेता है और परेशान होकर हाथ-पांव पटकता है। थोड़ी देर में उसकी मृत्यु हो जाती है। पशु के विष खाने और उसके उपरांत मृत्यु होने में यदि डाक्टरी सहायता फौरन ही न मिल जाए तो कुछ ही मिनट का समय लगता है।

पशुओं को न केवल नाइट्रेट विष से परन्तु फास्फोरिक अम्ल और पोटाश से भी बचाना चाहिए। ये दोनों ही क्षारक होते हैं, जिससे तुरन्त ही क्षार द्वारा यदि कोई खतरा न भी हो, तो कुछ समय पश्चात जिगर आदि अन्य अंगों पर फास्फोरस का बुरा प्रभाव पड़ता है और पशु की मृत्यु हो सकती है।

एक और विष जो प्रति वर्ष हजारों पशुओं की मृत्यु का कारण होता है, वह है रंग-रोगन में विद्यमान रहने वाला विष। अधिकांश लोगों को तो यह पता ही नहीं है कि रंग-रोगन पशुओं के लिए हानिकारक है। यह विष तो उन्हें आधुनिक जीवन में कहीं भी हाथ लग जाता है। बहुत से बछड़े तो किसी बिजली के खम्भे, रेल की पुलिया या किसी अन्य स्थान से रंग-रोगन के सीसे के मिश्रण के चाटने से ही मरते रहते हैं। कोई भी पशु आखिरी बूंद साफ करने तक रोगन का बर्तन नहीं छोड़ता। ताजे रोगन किए हुए स्थल तो मानों एक दो मुंह मारने के लिए पशुओं को हर समय मौन निमन्त्रण देते ही रहते हैं।

बहुत अधिक मात्रा में सीसे युक्त पदार्थ खाने के परिणामस्वरूप पशु के पेट में तीव्र पीड़ा होती है और वह छटपटाने लगता है। कभी-कभी वह दांत पीसता है और चिल्लाने लगता है। इस आकस्मिक और अजीब बीमारी से जो कि पल-पल विकट रूप धारण करती जाती है पशु का मालिक घबरा जाता है और यही सोचता है कि हो न हो किसी ने विष खिला दिया है या किसी भूत-प्रेत का असर है। इन्हीं उल्टे-सीधे विचारों में वह चीखते-चिल्लाते पशु के लिए उचित डाक्टरी इलाज का प्रबन्ध भी नहीं करता और बेचारा पशु यों ही मृत्यु का ग्रास हो जाता है।

कभी-कभी थोड़ी सी मात्रा में सीसे के खाने का भी प्रभाव पड़ता है। वे पशु, जो पुरानी बैटरी चाट जाते हैं या कृमिनाशक रासायनिक द्रव्य का छिड़काव किए हुए पेड़ों के नीचे चरते हैं उन पर तत्काल बुरा असर नहीं होता। पर विष उनके शरीर में पहुंच जाता है। पशु धीरे-धीरे कमजोर होते चले जाते हैं, भूख बहुत कम हो जाती है और धीरे-धीरे घुल-घुल कर वे मर जाते हैं। यदि आरम्भ में ही कारण पर ध्यान दिया जाए और उचित इलाज करा लिया जाए तो इस प्रकार से होने वाली पशु हानि को बचाया जा सकता है।

आज के जीवन में पशुओं की मृत्यु के लिए पग-पग पर उपस्थित इन कारणों को जानकर आश्चर्य किया जा सकता है परन्तु इससे भी अधिक आश्चर्य तो यह जानकर होता है कि इन भारी खतरों को केवल छोटे-छोटे उपायों से ही दूर किया जा सकता है। रंग-रोगन के बर्तन या डिब्बे, खाली किए हुए रासायनिक द्रव्यों के बोरे आदि पशुओं की पहुंच से बाहर रखे जाने चाहिएं। ध्यान रखना चाहिए कि रासायनिक खाद और रस द्रव्यों में डुबाए हुए बीज आदि के भंडार के दरवाजे टूटे फूटे न हों, नहीं तो पशु मौका मिलते ही वहां पहुंच कर विषयुक्त वस्तुओं को खा सकते हैं। कागज के थैलों को जिनमें खाद आया हो जला देना चाहिए। जूट या कपड़े के थैले ऐसे स्थानों पर रखने चाहिएं, जहां पशु पहुंच न सकें। पशुओं को कभी ऐसी जगह चरने न छोड़ा जाए। □

खैरवाड़ा में जन-सहयोग

धर्मपाल चौधरी

उदयपुर जिले के दक्षिण में अरावली की श्रेणियों में स्थित खैरवाड़ा तहसील में एक गांव बावलवाड़ा 1975 से पूर्व विकास की दृष्टि से हर एक क्षेत्र से पिछड़ा हुआ था।

28 अप्रैल, 1975 को सेवा मन्दिर नाम की संस्था ने गांव के मुखिया और सदस्यों की एक सभा बुलाई जिसमें 25 गांवों के सदस्यों के द्वारा मुखिया का चयन किया गया। लोगों का विचार था कि गांव के विकास के लिए सबसे उपयुक्त गांव का ही सदस्य हो सकता है। इस सभा में गांव के विकास के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम रखे गए :—

1. कृषि
2. अभियांत्रिकी
3. सहकारिता

इस दिशा में बावलवाड़ा गांव में निम्न कार्य हुए:—

1. कृषि	20 प्रदर्शन, मक्का, गेहूं कल्याण सोना का व्यापक स्तर पर बुवाई करना।
2. अभियान्त्रिकी	3 आदर्श शौचालय, 20, सोखते गड्डे।

3. भजन मण्डली द्वारा 10 लोगों को शराब छुड़ाना।

लेकिन गांव के सर्वांगीन विकास के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं था। कुछ ठोस और स्थायी कार्य करने की बात सोची गई। इसके लिए राजकीय माध्यमिक विद्यालय के कुछ कमरों का शिलान्यास हो चुका था। 25 जुलाई, 1978 को गांव के मुखिया ने एक प्रशिक्षण का आयोजन खैरवाड़ा में रखा। उसमें चर्चा हुई कि 50 प्रतिशत सरकार से अनुदान प्राप्त किया जा सकता है जबकि गांव वालों को भी 50 प्रतिशत योगदान करना पड़ेगा।

काफी वार्ता और परामर्श के पश्चात् एक 40×60 वर्गफुट हाल के निर्माण हेतु अनुमानित व्यय 65 हजार आंका गया। 40×25 वर्गफुट हाल बनाने के लिए दोबारा व्यय का अनुमान लगाया गया जो 30 हजार था। इसमें 15 हजार का योगदान गांव वालों ने देने को कहा जिसमें दस हजार नकद और पांच हजार रुपये वस्तु के रूप में थे। हाल का अनुमानित व्यय और गांव द्वारा दिया जाने वाला योगदान इस प्रकार था :

अनुमानित व्यय

4,000	60 ट्रक पत्थर चुनाई
1,000	गारा मिट्टी
2,500	100 बोरी सीमेंट
1,000	4×3 वर्ग फुट की 4 खिड़कियां—दर 250 रु० प्रति खिड़की
800	दो दरवाजे
2,000	1,000 वर्गफुट चौके फर्श हेतु।
8,000	छत पट्टियां आदि
5,000	छत पलास्टर
3,000	गर्डर 25×1
2,700	अन्य
30,000	

गांव द्वारा योगदान

4,000	पत्थर चुनाई
1,000	गारा
2,000	खिड़की दरवाजा
5,000	छत
3,000	मजदूरी
15,000	

राजकीय अधिकारियों द्वारा इस कार्यक्रम पर बातचीत के बाद भी हाल सितम्बर 1978 से जनवरी 1979 तक मात्र कागजों पर ही बनता रहा। एक निराशा सी नजर आने लगी।

लेकिन इंतजार की घड़ियां समाप्त हुई। ब्लाक प्रमुख साहब 10 जनवरी, 1979 को हाल की स्वीकृति की सूचना लाए। उन्होंने यह भी बताया कि 15 हजार की व्यवस्था गांव वालों को करनी है।

अब सबसे बड़ी समस्या जमीन की थी। इसके लिए विद्यालय के पास ही जमीन के लिए राव साहब तख्त सिंह जी से प्रधानाध्यापक जी तथा गांव वालों ने प्रार्थना की और राव साहब ने जमीन दान के रूप मे दे दी। आखिरकार हाल का शिलान्यास 1-2-1979 को बसन्त पंचमी के दिन राव तख्त सिंह के कर कमलों द्वारा किया गया और इसकी एक डाक्युमेंट्री फिल्म भी बनी।

इस कार्य में सारा गांव उमड़ पड़ा। नीवें खुदीं, कच्चा सामान एकत्र किया गया। हाल को सुसज्जित बनाने के लिए चित्रकारी, स्टेज, तथा महापुरुषों के चित्र लगवाने का कार्य किया गया।

पूर्व में अनुमानित व्यय 30 हजार रुपया था और वह जुलाई 1978 के समयानुसार था, पर जब काम शुरू हुआ, समय ने चुनौती दी। मंहगाई आसमान छूती नजर आई। गांव वाले और भवन-निर्माण समिति के सदस्य रचनात्मक विचारों के थे। अतः उन्होंने नक्शे में कुछ परिवर्तन किया। हाल का स्थायित्व बना रहे, इसलिए उन्होंने 10 हजार रुपये

तक का और अनुमान लगा कर गारे की बजाय चूने का प्रयोग करने का निर्णय लिया। इस प्रक्रिया में 2,000 रुपये अधिक खर्च हो गए। गर्डर में तीन हजार के स्थान पर पांच हजार तथा मजदूरी आदि पर दो हजार रुपये अधिक खर्च हुए। वाणिज्य संकाय के दो कमरे बन गए हैं। आशा है 81-82 तक दो कमरे और बन जाएंगे। इस संदर्भ में मैं माननीय डा० डी० पाल चौधरी जी से और प्रेरणा देने तथा मार्ग दर्शन करने की प्रार्थना करता हूं।

हाल का कार्य 25-2-79 से प्रारम्भ हुआ और 18-4-79 तक हाल की दीवारें बन गईं। इसमें गांव से चन्दा एकत्र करने व सामान एकत्र करने में काफी परेशानियां उठानी पड़ीं लेकिन इस पुनीत कार्य के सामने तुच्छ प्रतीत हुईं। आखिरकार जून, 1979 के अन्त में यह विशाल हाल पट्टियों से ढक दिया गया। सम्पूर्ण रूप से तैयार हो जाने पर 23 जनवरी, 1980 से इसे साइलेंस जोन के रूप में कार्य में लिया जाने लगा है। वैसे 23 जनवरी सुभाष जयन्ती का दिन होता है अब प्रश्न है इसके नामकरण का।

ग्राम बावलवाड़ा के नागरिक बन्धु जिन्होंने तीन कमरों एवं हाल एवं पूर्व के तीन कमरों के शेष कार्य को पूरा करने में जो जन-सहयोग एवं श्रमदान दिया, भुलाया नहीं जा सकता। सभी नागरिक धन्यवाद के पात्र हैं। विद्यालय विकास समिति के प्रधानाध्यापक एवं स्टाफ तथा ग्राम पंचायत ने जिस श्रम, मेहनत व लगन से इस कार्य को प्रारम्भ कर के पूरा किया, बहुत धन्यवाद के पात्र हैं। माध्यम सेवा मन्दिर के भी हम बहुत ही आभारी हैं। शर्मा साहब, अमृत लाल जी, श्रीमान शान्ति लाल जी फड़िया, सह हमजोली सदस्य तथा गांव के तमाम गणमान्य दान दाता जिन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहयोग दिया धन्यवाद के पात्र हैं। ☐

प्रस्तोता
भगवतीलाल पानेरी
हमजोली मुखिया,
ग्राम्य विकास परियोजना
सेवा मन्दिर, बावलवाड़ा

जलकुम्भी :

वरदान या अभिशाप

बालमुकन्द

पिछले कुछ वर्षों से नदियों, झीलों और छोटे तालाबों, तलाइयों आदि में जलकुम्भी का आतंक देश के कई इलाकों में बड़ी तेजी से बढ़ रहा है। होता यह है कि यदि इसकी सुरसा जैसी बढ़ोत्तरी तुरन्त नियंत्रित नहीं की जाती तो वह जलस्रोत दलदल में बदल जाता है। नदियों का प्रवाह मन्द होकर नदी के पेंदी के पेटे में दूषित कीचड़ बढ़ जाता है और मच्छर पलने लगते हैं।

जलकुम्भी है क्या ?

पानी पर फैली जलकुम्भी एक विशेष किस्म की हरियाली देने वाली बेल है। ईकोनिया क्रेसीयस के नाम से वनस्पति विशेषज्ञ वैज्ञानिकों का सुपरिचित यह पौधा हमें ही नहीं बल्कि दुनिया भर को ब्राजील द्वारा प्राप्त सौगात है। खूबसूरत नीले-नीले फूलों और सघन हरे पत्तों, स्पंजी तने वाला यह जलीय पौधा सन् 1896 ई० में भारत की सैर पर आया था। पर यहीं जमकर बैठ गया और सिर्फ 85 साल में ही यह हिन्दुस्तानी खरपतवारों का सरताज बन बैठा। विश्व के 10 कुख्यात खरपतवारों में आज इसकी गिनती है। क्रम के हिसाब से काफी ऊपर इसका क्रम आंका गया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन इसके फैलाव से बड़ा परेशान है। वह इसको नष्ट करने के लिए भरपूर आर्थिक सहायता देता है। किन्तु "मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों-ज्यों दवा की" वाली हालत होती चली गई और जलकुम्भी का साम्राज्य तेजी से बढ़ता ही चला गया।

असल में जलकुम्भी आश्चर्यजनक तेजी से बढ़ती है। लूसीआना (अमेरिका) में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार जलकुम्भी का एक पौधा सिर्फ तीन मास यानी 90 दिन में 2 लाख 48 हजार पौधों में बदल जाता है। इसकी वजह से खेती, पेयजल सुविधाएं, सिंचाई, मलनिकासी, नौका चालन, मछली पालन आदि सभी जलीय सुविधाएं तेजी से प्रभावित होती हैं।

हमारे देश में बंगाल में 15 हजार हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र में इसका फैलाव है जो दिन प्रतिदिन बहुत तेजी से बढ़ता जा रहा है। पूरे देश में इसका फैलाव छह लाख हेक्टेयर से भी अधिक क्षेत्र में है, । बिहार, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश. असम, पंजाब, नागालैण्ड, तमिलनाडु, त्रिपुरा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश और राजस्थान खासतौर से इसकी चपेट में हैं। शेष जगहों में भी इसका फैलाव होने लगा है। तमिलनाड, असम और बंगाल सरकारों ने तो इसको नष्ट करने के लिए कानून बना दिया है। अब युद्ध स्तर पर प्रयत्न जारी है। पश्चिमी बंगाल में लगभग 12 करोड़ रुपये वार्षिक का नुकसान इसकी वजह से हो रहा है। इसका समूल नाश असंभव है। हां, इसकी बढ़ोतरी रोकने के लिये हर पक्ष हमला करे तो बात बन सकती है।

उचित प्रयोग करें

अभी हमारे यहां जलकुम्भी को पानी से निकालकर किनारे फैंक देते हैं। परन्तु यह कारगर उपाय भी नहीं है और मंहगा भी है। बैरकपुर (कलकत्ता) के मछली अनुसंधान संस्थान ने जलकुम्भी हटाने की मशीन का आविष्कार किया है। कौपर सल्फेट, लेडनाइट्रेट, मैथोसोन आदि दवाओं के छिड़काव से भी इसके फैलाव में कमी आती है। किन्तु यह बहुत मंहगे पड़ते हैं।

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक चिन्तक श्री ब्रजमोहन गुप्त ने जलकुम्भी को अभिशाप नहीं वरदान बताया है। उनका कहना है कि इसे मिटाने पर श्रम, समय और धन फूंकने की बजाय इसके उचित उपयोग की ओर ध्यान देना चाहिए । इसका साहलेज काफी पौष्टिक होता है और दूध बढ़ाने वाला भी। प्रदूषण रोकने में भी इसका उपयोग हो सकता है। शासकीय व स्वायत्तशासी और सामाजिक संस्थान यदि पहल करके इसका सदुपयोग करें तो जलकुम्भी देश के लिए वरदान साबित होगी।

मिट्टी, गोबर और राख में मिलाकर जलकुम्भी के पौधों को दो तीन माह तक सड़ाने से बहुत बढ़िया किस्म की कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाती है । यह नमी को रोकती है। बलुआर किस्म की जमीन को ठीक करती है। उसको उपजाऊ बना देती है। जलकुम्भी की खाद सामान्य खादों से दुगनी—चौगुनी पोषक तत्वों वाली होती है। हमारे देश में जलकुम्भी का कम्पोस्ट बनाने का अभियान चलाकर खाद और रासायनिक उर्वरकों की कमी को पूरा किया जा सकता है।

गैस तैयार करके भी इससे काफी लाभ उठाया जा सकता है। अमेरिका में किए गए प्रयोगों से पता चला है कि एक हेक्टेयर पानी में फैली जलकुम्भी के जाल से 70 हजार घनमीटर गैस उपलब्ध होती है जोकि लगभग 50 हजार रुपयों के बराबर मूल्य की होगी। हमारे देश में भी दुर्गापुर के सेंट्रल मैकेनिकल रिसर्च इस्टीट्यूट ने इस दिशा में जो खोज की है उसके अनुसार यह गोबर से जल्दी सड़ती है और इससे गैस भी अधिक मिलती है। एक किलो निर्जल भार वाली जलकुम्भी से 374 लिटर मीथेन गैस तैयार की जा सकती है । इस गैस का औद्योगिक स्तर पर भी प्रयोग किया जा सकता है। इसे गुब्बारों में भरकर अन्यत्र भी ले जा सकते हैं। हमारे देश में कृषि यंत्रों की प्रमुख निर्माता किर्लोस्कर कम्पनी ने ऐसे गुब्बारे बनाए भी हैं और वे काम में भी आ रहे हैं । गैस बनाने से उसे हटाकर फिंकवाने का भारी खर्च बच जाता है ।

इन्दौर के डा० आर० डी० पुरोहित ने जलकुम्भी के रस पर शोध कार्य करके उसमें वृद्धिकारक हारमोनों का पता लगाया है। इन हारमोनों के इस्तेमाल से अनाज के बीजों का अंकुरण शीघ्र तथा व्यवस्थित रूप से होता है । भारतीय कृषि में इसके व्यापक प्रयोग से फसलों में क्रान्तिकारी परिवर्तन संभव है ।

राष्ट्रीय दुग्ध संस्थान, करनाल में हुए अनुसंधान के अनुसार जलकुम्भी का साहलेज पौष्टिक भी होता है और दूध बढ़ाने वाला भी। घास में या धान के भूसे के साथ मिलाकर इसका पशु आहार के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। आर्थिक दृष्टि से यह 30 प्रतिशत सस्ता भी है।

फिलिपीन्स में इसके लम्बे तनों के रेशों को अन्य धागे के साथ मिलाकर कपड़ा व कागज की लुगदी बनाई जाती है। पत्तियों, जड़ों, तनों आदि से पशु आहार बनाया जाता है । जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के दो शोध छात्रों का शोध कार्य बताता है कि पर्यावरण की शुद्धि में यह बड़ा महत्वपूर्ण पौधा है। यह प्रदूषण को रोकता है । श्री मोहम्मद असरारुल हक और सुधिरेन्द्र शर्मा नामक शोध छात्रों ने इस दिशा में काफी काम किया है। अमेरिका की अन्तरिक्ष एजेन्सी 'नासा' अपनी फोटोग्राफिक प्रयोगशाला का प्रदूषण दूर करने हेतु जलकुम्भी का ही प्रयोग सफलतापूर्वक कर रही है । गंदगी को सोखने की इसकी क्षमता का भी उपयोग जल-मल निकासी के लिए किया जा सकता है। सूडान की सरकार ने 'श्वेत नील' की जलकुम्भी की समस्या को बायोगैस उत्पादित करके वरदान में बदल दिया है। हमारे देश में भी जल-मल निकासी की व्यवस्था बड़ी ही कमजोर है। इस काम में जलकुम्भी का उपयोग करने की पहल तेज होनी ही चाहिए। पल्प और पेपर रिसर्च इंस्टीट्यूट जेकेपुर (उड़ीसा) में यही तरीका गंदगी सोखने के लिये बड़ी ही सफलतापूर्वक अपनाया जा रहा है।

इस प्रकार यदि तालाबों, नदियों और झीलों, तलाइयों और नालों आदि में फैली जलकुम्भी के सन्दर्भ में हम थोड़ी-सी अतिरिक्त मेहनत कर लें अथवा ग्राम पंचायतें या अन्य समाज सेवी संगठन सक्रिय हो जाएं तो पानी के स्रोतों के लिये संकट नजर आने वाली अभिशाप भरी जलकुम्भी वरदान बन जाएगी ।

गैस बनाने की प्रक्रिया अपनाकर अथवा गोबर, कचरे और जलकुम्भी के तनों, पत्तों आदि को सड़ाकर कम्पोस्ट खाद बनाकर पंचायतों की आमदनी भी बढ़ाई जा सकती है। इस सन्दर्भ में बड़े ही धैर्यपूर्वक योजनाबद्ध ढंग से काम होगा तो जलकुम्भी अभिशाप नहीं बल्कि वरदान बन जाएगी। अतिरिक्त उपयोगी तत्वों के इस बहुत बड़े स्रोत से पूरा लाभ उठाने की दिशा में हमें प्रयत्न करना ही चाहिए। □

द्वारा : विश्लेषण प्रकाशन सेवा,
236-ब्रजराजपुरा,
कोटा-324006 (राज०)

बूंद बूंद से घट भरे

अल्प बचत से राष्ट्र की समृद्धि

राजस्थान का सांस्कृतिक पर्व गणगौर

✻ राम बिहारी बिश्वकर्मा

गणगौर राजस्थान का प्रमुख धार्मिक पर्व है। यह त्यौहार स्त्रियों को उनके सीधे-साधे आमोद-प्रमोद का अवसर प्रदान करता है, साथ ही नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों पर भी विशेष जोर देता है। गणगौर में 'गण' शब्द शिव का तथा 'गौर' शब्द गौरी यानी पार्वती का बोधक है। पार्वती भगवान शंकर की अर्धांगिनी और सीता तथा सावित्री जैसी नारियों के लिए भी आदर्श हैं। वे नारी मात्र के अखण्ड सौभाग्य की प्रतीक मानी जाती हैं। भारतीय संस्कृति की परम्परा में दाम्पत्य-जीवन के प्रेम और आनन्द का प्रमुख स्रोत शिव और पार्वती को माना गया है। राजस्थान की नारियां इसी आदर्श से अनुप्राणित होकर गणगौर का त्यौहार मनाती हैं। इस त्यौहार की अधिकांश बातों का सम्बन्ध नारियों से है और इन समारोहों में 'गौर' यानी पार्वती को प्रमुखता दी गई है और 'गण' या 'इसर' यानी गौरी के पति 'शंकर' की आनुषंगिक भूमिका रहती है।

राजस्थान में 'गणगौर' का त्यौहार वर्तमान रूप में कब से मनाया जा रहा है, इस सम्बन्ध में ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता है। परन्तु भविष्य पुराण के एक श्लोक से अनुमान लगाया जा सकता है कि इस त्यौहार का प्रारंभ उन्हीं दिनों हुआ होगा। श्लोक इस प्रकार है :

'आन्दोलनम् मम कृते कास्येथा स्वलंकृतम ।
त्वया संहर में अहं यथाचैत्रे विशेषतः ।

यानी हे भगवन्, आप मेरे लिए, चैत्र महीने में, एक सुसज्जित झूला मंगवाओ, जिसमें तुम्हारे साथ बैठकर मैं विहार करूं।

'गणगौर' का त्यौहार बसन्त ऋतु का त्यौहार है और यह चैत्र प्रतिपदा से आरंभ होता है तथा शुक्ल चतुर्थी तक चलता है। होलिका-दहन के पश्चात स्त्रियां उसकी राख ले जाकर उसमें गेहूं तथा जौ बोकर प्रतिदिन उसे पानी से सींचती हैं। बीज जम जाने के बाद तेजी से बढ़ने लगता है और उसमें 'जवरा' निकल आता है। कन्याएं अपनी इच्छा के अनुरूप अच्छा पति पाने के लिए तथा विवाहिता नारियां अपने पति के कल्याण, स्वास्थ्य, दीर्घायु और सुखमय दाम्पत्य जीवन की कामना लेकर 'गणगौर' की पूजा-अर्चना करती हैं। नव-परिणीता वधुओं के लिए आवश्यक है कि वे विवाह के बाद अपने पीहर आने पर पूरे उल्लास के साथ 18 दिन तक पर्व में सम्मिलित हों। वे बबूल की दातुन भेज कर अपनी सहेलियों को निमंत्रित करती हैं। बहुत सी अविवाहित लड़कियां 18 दिनों तक व्रत रखती हैं तथा दिन में वे केवल एक ही बार भोजन करती हैं। विवाहित नारियों के लिए भी 18 दिनों तक व्रत रखना अच्छा माना जाता है।

होली के पश्चात् कन्याएं प्रतिदिन प्रातः दूर्वा, पुष्प तथा जल लाने के लिए बाग में जाती हैं। वे प्रायः चार या सात की संख्या में जाती हैं। बाग में पहुंचने के बाद वे गाती हैं :

"बाड़ी वाला बाड़ी खोल बाड़ी की
किवाड़ी खोल

छोरियां आई दूब ने————————।"

बालिकाएं कुएं पर जाती हैं और कुंकंम तथा अक्षत चढ़ाती हैं और पुनः यह गीत गाती हैं —

"गौर ए गणगौर माता खोल ए किवाड़
बाहर ऊभी थाने पूजण वाली———

अर्थात् हे मां अपना द्वार खोलो तुम्हारी बालिकाएं पूजा करने के लिए बाहर खड़ी हैं। उसके बाद कन्याएं अपने सिर पर पल्लवों से युक्त जल-कलश धारण किए हुए गीत गाते हुए वापस आती हैं और अपने घर के निकट पहुंचती हैं। 'इसर' तथा 'गौरी' को शयनावस्था में मान कर उन्हें जगाने के लिए वे गीत गाती हैं।

जिस घर में 'गणगौर' की पूजा की जाती है, वहां दीवाल पर 'इसर' और 'गौरी' के चित्र बनाए जाते हैं। जिसमें उन्हें चौपड़ खेलता हुआ दिखाया जाता है। इन चित्रों के नीचे मिट्टी तथा लकड़ी की कई अन्य मूर्तियां भी रख दी जाती हैं। त्यौहार का कार्यक्रम सवेरे नौ-दस बजे से शुरू होता है। देवी की स्तुति, गीतों और नृत्य से सारा वातावरण मनमोहक हो उठता है। देवी की स्तुति इस प्रकार की जाती है—

"आओ माता इण घर पावणां

ऊभा विरमाजी वीनवै

आओ माता इण घर पावणां

ऊभा सूरज जी बीनवै——"

ऐसा विश्वास किया जाता है कि पूजा करने वाली स्त्री यदि क्रोध में पूजा करती है तो उसे अस्वस्थ पति प्राप्त होगा और यदि वह बिना ठीक से कपड़े पहिने पूजा करती है तो उसे पति ऐसा मिलेगा, जिसके तन पर ठीक से कपड़े नहीं होंगे।

मूर्तियों की पूजा करने के बाद स्त्रियां 'गौरी' तथा 'इसर' की मूर्तियों के नीचे 16 स्थानों पर कुंकंम, काजल तथा मेंहदी के निशान लगाती हैं। वे अपने हाथ से कुएं से जल भर कर लाती हैं और दूर्वा से जल छिड़कती हैं। पूजा करते समय स्त्री की नाक में 'नथ' अवश्य होना चाहिए। गौरी-पूजा के समय अनेक गीत गाए जाते हैं। इनमें कई गीत आभूषणों तथा 'चुंदरी' को लेकर गाए जाते हैं। पूजा के समय गाया जाने वाला एक गीत, इस प्रकार हैं :

"म्हारा हाथ में जवरा ए

कोरो कूंडो जल भरियो

म्हे तो सात सहेल्यो ए

गवरल माता पूज रही

बांया पूजन पूजास्या ए————"

अर्थात मेरे हाथ में हरा 'जवरा' और नव-कलश में स्वच्छ जल है, मैं अपनी सहेलियों के साथ 'गोराल' की पूजा कर रही हूं । राजस्थान में विभिन्न भागों में ये गीत अनेक तरह से गाए जाते हैं लेकिन मूल भावना सभी में एक जैसी ही होती है । गौरी की पूजा के अवसर पर जो गीत प्रायः गाए जाते हैं, उनमें बीच-बीच में कई पौराणिक कहानियां भी जुड़ी होती हैं ।

गणगौर त्यौहार के अवसर पर स्त्रियां प्रायः पीहर में रहना अधिक पसन्द करती हैं । ताकि वे घरेलू कार्यों के झमेलों से मुक्त होकर नाच-गान का भरपूर आनन्द ले सकें । इस अवसर पर मेंहदी रचाने की भी प्रथा है । स्त्रियां अपनी हथेलियों पर फूल, स्वस्तिक, तोता, आम, चौपड़ तथा चुनरी आदि की आकृतियां रचाती हैं । विवाहित स्त्रियों के लिए तो यह त्यौहार खास आकर्षण का त्यौहार होता है ।

होली के 7 दिन बाद अविवाहित लड़कियां कुम्हार के घर जाती हैं और मिट्टी के ऐसे पात्र लाती हैं जिनमें कई छेद हों । वे उसमें दीपक जला देती हैं और 'धुडलिया' गीत गाते हुए पैसे, गुड़ तथा मिठाइयां आदि इकट्ठा करती हैं । जब गणगौर त्यौहार पूरा हो जाता है तो उस बर्तन को तोड़ कर, पैसे निकाल कर वे उससे खूब खाती-पीती और मौज करती हैं । 'धुडलिया' मनाने के पीछे एक ऐतिहासिक कथा है––कहा जाता है कि सम्वत् 1348 में चैत्र शुक्ल तृतीया (13 मार्च, 1491) को अजमेर के सूबेदार मल्लू खां ने हमला किया और 140 स्त्रियों को अपने साथ उठा ले गया । उसके साथ सिन्ध का मीर 'धुडली खां' भी था । जोधपुर के राजा राव सांथाल ने जब यह खबर सुनी तो मल्लू खां के पड़ाव पर अचानक हमला बोल दिया । घमासान लड़ाई में धुडली खां मारा गया, परन्तु राव सांथाल को भी गंभीर चोट आई और उनकी मृत्यु हो गई । लेकिन उन्होंने अपनी जान की कुर्बानी देकर भी नारियों के सम्मान को रक्षा की । इसीलिए आज भी हर वर्ष 'गणगौर' के अवसर पर उनकी बहादुरी को याद किया जाता है । त्यौहार-समापन के अवसर पर लोगों का उत्साह और भी बढ़ जाता है । वे केवल त्यौहार के ही संबंध में दिन रात बातें करते रहते हैं । स्त्रियां 'इसर' और 'गौरी' को सजाने के लिए स्वयं वस्त्राभूषण तैयार करती हैं । वे ढोकला, चूरमा, लप्सी तथा अन्य मिष्ठान आदि बनाती हैं । बाजे और नृत्य के साथ 'इसर' और 'गौरी' की पूजा की जाती है और 'जवरा' और जल चढ़ाया जाता है । दोपहर के बाद शुभ मुहूर्त में विवाहित स्त्रियां समूह बना कर किसी बाग, तालाब या कुएं पर जाती हैं । इस अवसर पर जो गीत गाया जाता है, वह गौरी के पति-गृह जाने का प्रतीक होता है ।

लोग समूह में नाचते-गाते हैं और गौरी की मूर्ति को जल चढ़ाते हैं । पहले और दूसरे दिन गौरी की मूर्ति का मुंह पीछे की ओर रखा जाता है और तीसरे दिन अर्थात अंतिम दिन 'इसर' और 'गौरी' की मूर्तियों को किसी तालाब या कुएं में प्रवाहित कर दिया जाता है । गौरी की विदाई के समय सारी क्रियाएं वही होती हैं जो किसी कन्या के अपने पति-गृह की विदाई के समय होती हैं । महिलाएं विदाई के समय बहुत दुःखपूर्ण हृदय से आंसू भर कर विदाई के गीत गाती हैं और विदाई के पश्चात आंचलों से आंसू पोंछते हुए घर की ओर कदम बढ़ा लेती हैं ।

वर्तमान राजस्थान बनने से पूर्व राजाओं के शासनकाल में 'गणगौर' का पर्व बड़े धूमधाम से मनाया जाता था और उसमें शाही बैण्ड-बाजे का भरपुर उपयोग होता था । राजा स्वयं इन समारोहों में शामिल होता था । उधर, महारानी के 'जनाने' में भी 'गणगौर' पूजा होती थी जिसमें राज्य के अधिकारियों और गणमान्य लोगों की स्त्रियां भाग लेती थीं । जोधपुर में गणगौर समारोह का सबसे प्रमुख आकर्षण 'लोटिया' मेला है । प्रातःकाल ही कुंवारी लड़कियां अपने सिर पर चांदी या पीतल के 7 पात्र सजा कर रखती हैं और वे दूर्वा तथा जल भर कर लाती हैं और मधुर गीत गाती हुई जाती हैं । जयपुर में राजमहल के 'त्रिपोलिया' दरवाजे से केवल गौरी की मूर्ति बाहर निकाली जाती है । नाथद्वारा में, गणगौर का पर्व बड़े विचित्र तरह से मनाया जाता है । यहां गणगौर का जुलूस 7 दिन तक चलता है और एक दिन देवी को एक खास रंग के वस्त्र आदि पहनाए जाते हैं । और दर्शक लोग भी उसी रंग के वस्त्र पहनते हैं । समारोह के अंतिम दिन गौरी को काले वस्त्र पहनाए जाते ह । उनको ले जाने वाली स्त्री भी उसी तरह का वस्त्र पहने रहती है । यह गौरी की विदाई का सूचक होता है । बूंदी को छोड़ कर अन्य रजवाड़ों में इसी तरह के समारोहों का आयोजन किया जाता रहा है । बूंदी में 6 मार्च, 1706 में गणगौर बन्द हो गया क्योंकि बूंदी के महाराजा राव बुद्ध सिंह के भाई उसी दिन अपनी पत्नी स्वरुप कंवर के साथ नौका विहार करते समय डूब कर मर गए थे । उदयपुर, में, 'गौरी' और 'इसर' की मूर्तियों को नगरपालिका को सौंप दिया जाता है और वह जुलूस का आयोजन करती है । जयपुर में, 'गणगौर समिति' के तत्वावधान में समारोह का आयोजन किया जाता है । अलवर में, गणगौर का जुलूस पहले ही की तरह अब भी आयोजित होता है परन्तु अब उसमें रियासती 'लावाजमा' नहीं किया जाता है साही 'लावाजमा' उधार ले लिया जाता है ।

राजस्थान के लगभग 62 हजार गिरासियों के लिए 'गणगौर' पर्व का विशेष महत्व है । वहां होली त्यौहार के बाद समारोह लगभग डेढ़ मास तक यानी वैशाख शुक्ल की अक्षय तृतीया तक रहता है । गणगौर की मूर्तियां एक गांव से दूसरे गांव तक ले जाई जाती हैं और त्यौहार-समापन के समय तक, वे जिस गांव से चली थीं, उसी गांव फिर पहुंच जाती हैं । इस दौरान गिरासिया लड़के तथा लड़कियां अपना जीवन-साथी भी चुनते हैं ।

राजस्थान में, गणगौर का त्यौहार लोगों की सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक आकांक्षाओं का प्रतीक है । इसमें आमोद-प्रमोद पर कम, लेकिन व्रतों तथा धार्मिक अनुष्ठानों पर विशेष बल दिया जाता है और आशा है कि आधुनिक सभ्यता के प्रभाव के बावजूद यह पर्व अपनी प्राचीन गरिमा, परम्परा और लोकप्रियता को बनाए रखेगा । ☐

हिन्दी की ताकत

✲ के० के० राघवन

हर एक राष्ट्र की अपनी विशेषताएं हैं। इनमें वेश-भूषा, आचार-विचार और भाषा मुख्य हैं। भारत एक बहु भाषा-भाषी देश है। यहां कई भाषाएं बोली जाती हैं। हमने देखा है कि समूचे उत्तर भारत को हिन्दी ने जोड़ रखा है। याने हिन्दी भाषी इलाका भारत का बड़ा इलाका है। हिन्दी की इसी शक्ति को देखकर ही राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने यह निश्चय किया कि हिन्दी ही हमारे अन्तर्प्रान्तीय प्रयोग की भाषा हो सकती है। राष्ट्रपिता की इसी दूरदर्शिता के मुताबिक आज हिन्दी हमारी राजभाषा बन गई है। हिन्दी स्वतंत्र एवं स्वाभिमानी देश की राष्ट्रभाषा है। इस बात में जरा भी सन्देह नहीं कि समूचे भारत की विभिन्न भाषाओं में पूरे भारत को एकता के सूत्र में बांधने की दृष्टि से एक विशाल राष्ट्र की सम्पर्क-भाषा होने की सारी ताकत तथा मान्यताएं केवल हिन्दी में ही हैं। अत्यन्त सरल भाषा होने के कारण देश में राष्ट्रीय चेतना जगाने की प्रेरणा हिन्दी में विद्यमान है।

राष्ट्र की ताकत जनता की एकता में मौजूद है। जनता की एकता के लिए हिन्दी से बढ़कर और कोई भाषा नहीं है। अंग्रेजी के जरिये जो एकता आज कायम समझी जाती है, वह टिकाऊ नहीं है। क्योंकि अंग्रेजी आम जनता की भाषा नहीं है। भारत की मिट्टी में वह पनपने वाली भी नहीं है। अंग्रेजी से या किसी अन्य भाषा से हिन्दी का कोई झगड़ा नहीं है। विश्वभाषाओं में अंग्रेजी का समुन्नत स्थान है। मगर हिन्दी के मुकाबले में अंग्रेजी, को खड़ा करके यह कहना कि अंग्रेजी ही हमारे लिए उपयुक्त है, इसलिये अंग्रेजी को ही यहां रहने दिया जाए, यह अनुचित एवं असंगत है। हिन्दी के माध्यम से ही हम. भारतीयों को आपस में निकट ला सकते हैं। भारतीय संस्कृति की मूल भावना हिन्दी में ही छिपी हुई है। अपनी इसी विशेषता के कारण भारतीय संस्कृति मानवीय संस्कृति का पर्यायवाची मानी जाती है। विचारपूर्वक देखा जाए तो मालूम होगा कि भारतीय संस्कृति समता और ममता के चरणों से आगे बढ़ती है। वह अपने घर, परिवार, जाति, और देश की सीमाओं को पार करती हुई वसुधा पर के प्राणियों में एक-सूत्रता तथा आत्मीयता स्थापित करती चलती है। हिन्दी जानने मात्र से ही यह सिलसिला बेरोक बढ़ता रहेगा।

हिन्दी को राजभाषा का पद मिलने के बाद भारत के बाहर अधिकांश देशों में हिन्दी के प्रति विशेष रुचि दिखाई दे रही है। इस दृष्टि से रूस, अमेरिका, इंग्लैण्ड, जापान, चेकोस्लोवाकिया, इटली आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। विश्व के 79 विश्वविद्यालयों और संस्थाओं में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की समुचित व्यवस्था है। इन विदेशी विश्वविद्यालयों में उच्चस्तरीय हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था तो है ही, शोध विभाग भी है, जहां भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से हिन्दी और उसकी बोलियों का सम्यक अध्ययन हो रहा है। हिन्दी के मूर्धन्य लेखकों और कवियों की लोकप्रिय रचनाओं का अनुवाद उन भाषाओं में किया जा रहा है। इस दृष्टि से रूस, चेकोस्लोवाकिया, जर्मनी और अमेरिका का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है।

सोवियत संघ याने रूस में अन्य देशों की अपेक्षा काफी समय से हिन्दी की ओर ध्यान दिया जा रहा है। वहां हिन्दी पुस्तकों का प्रकाशन भी बड़े पैमाने पर होता है। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द के उपन्यास, डा० रामकुमार वर्मा के नाटक, यशपाल की कहानियां, पंत और प्रसाद की कविताएं रूसी भाषा में अनुदित करके छापी जाती हैं। श्री ए० ए० वारान्किनोव हिन्दी के प्रकांड पंडित हैं। आपने रूसी भाषा में तुलसीदास की रामायण का पद्यानुवाद किया है जो विशेष लोकप्रिय हुआ है। इसी प्रकार अमेरिका के अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी अध्यापन की व्यवस्था है। अलावा इसके चेकोस्लोवाकिया, जापान, इंग्लैण्ड, पश्चिम जर्मनी तथा श्रीलंका के विश्वविद्यालयों में भी इसकी समुचित व्यवस्था होती है। इससे हम समझते हैं कि हिन्दी की लोकप्रियता दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है।

भारतीय संस्कृति समन्वय की ओर संकेत करती है। वह विभेद की नहीं, अभेद की उपासिका है। भारत की इस प्राचीन एवं शाश्वत मूल्यों पर आधारित संस्कृति को एक जीवन दर्शन के रूप में अभिव्यक्त करने का काम वर्तमान समय में हिन्दी को ही करना है। इसके कई कारण हैं। हिन्दी संस्कृत की बेटी है। संस्कृत तो आर्यभाषा गोत्र की है। उसका आविर्भाव भी यहीं से हुआ है। अतः भारत की सभी विशेषताएं इसमें विद्यमान हैं। संस्कृत की बेटी होने के नाते सभी भारतीय भाषाओं से उसका निकटतम संबंध है। हिन्दी सबसे सबल और मीठी भाषा है। उसका स्वर-माधुर्य गंधर्वों के स्वर को भी मात करने वाला है। इन कारणों से हम यह भी कह सकते हैं कि हिन्दी आर्य भारत का प्रतीक भी है। हिन्दी ने सारे देश में भारतीय संस्कृति को बनाए रखा, भारतीयता के बोध को जीवित रखा। कानून आजकल हिन्दी के पक्ष में है। मगर हिन्दी कभी कानून से आगे नहीं बढ़ेगी इसमें आधुनिकता और भारतीयता के जो संस्कार हैं, वे ही इसे आगे बढ़ाएंगे। □

('केरल भारती' से साभार)

अढ़ाई कट्टे में अयाची मिश्र

मृदुला सिन्हा

लखपति, करोड़पति बनने की होड़ में आज कोई मिथिला के पंडित अयाची मिश्र का आदर्श रखे तो लोगों को उनकी जीवन शैली ही हास्यास्पद लगेगी अथवा अपने समाज में जमाने से चली आती कोई दंत कथा ।

मिथिला की धरती का यह सौभाग्य रहा है कि वहां एक से एक पंडित पैदा होते रहे हैं । पं० अयाची मिश्र उन्ही में से एक थे । उनकी विद्वत्ता भी विचित्र ही रही । इनका जन्म एक साधारण परिवार में हुआ । पुत्र जन्म पर मां फुली न समाई । पुत्र जन्म के समय सेवा सुश्रुषा करने वाली दाय (चमईन) ने ईनाम बख्शीश मांगा । निर्धन मां के पास कोई ऐसी चीज न थी जो चमईन को दे सकती । उनकी मां के उद्‌गार थे । "मैं अपने पुत्र की पहली कमाई तुझे दूंगी" ।

चमईन हर्षोल्लसित हो बच्चे को प्यार करने लगी । एक बार पुनः उसे अपनी टांगे पसार सुला लिया । इस बार बड़े मजबूत हाथों से तेल मलती उससे बातें करती रही । देख बबुआ । नौलखिया होकर जीना । मेरी उम्र ले लेना लेकिन पहली कमाई तो मुझे ही देना । "बच्चा के हां के हां करता जाता । जैसे कुछ प्रश्न पूछ रहा हो । चमईन बार बार अपनी मनोकामना दुहराती रही । ऐसे समझाकर बोलती मानों उसकी भाषा का पंडित उसकी गोद में पड़ा हो ।

नाम के पंडित शिशु के पल्ले कुछ भी नहीं पड़ा । तभी तो मिथिला नगरी, में आयोजित शास्त्रार्थ में विजयी पंडित अयाची मिश्र अपनी पहली कमाई मां को दे डाले । संतोषी मां के भी त्याग की सीमा नहीं । पुत्र द्वारा अपनी विद्वत्ता के बल से प्राप्त ढ़ाई लाख का राजकीय पुरस्कार उसकी पहली कमाई ही तो थी । मां को पुरानी बात याद हो आई । "बेटा यह तो तुम्हारी पहली कमाई हुई न ।" खुश होती हुई बोली ।

"हां । मां ।" अयाची मिश्र ने बड़ी तटस्थता से जबाव दिया ।

"बेटा । मेरी एक बात सुन । मैं तुम्हारे जन्म के समय चमईन को कुछ भी ईनाम नहीं दे पाई थी । मैंने उससे कहा था कि बेटे की पहली कमाई उसे ही दूंगी ।" मां ने सहजता मे कहा ।

"कहां है वह", बेटे के स्वर की सहजता मे मां मात खा गई ।

बुढ़िया की टूटी फूटी झोंपड़ी के बाहर दस्तक देता कोई आज ढ़ाई लाख का हार लिए खड़ा होगा उसने कभी सोचा भी होगा क्या । शायद स्वप्न भी न आए होंगे । बुढ़िया माला माल हो गई । मकान खेत खलिहान सब हो गए । गांव में पोखर खनवायी, कुआं खुदवाया, दान पुण्य किया । उसके द्वारा खुदवाया पोखर आज भी है जो चमईनिया पोखर के नाम से मशहूर है ।

लेकिन अयाची मिश्र । उनका जीवन वैसे ही बीता । ढ़ाई कट्टे पुस्तैनी जमीन थी उनकी । उन्होंने जिन्दगी में उससे ज्यादा की याचना भी नहीं की । जरूरत भी क्या थी । अपनी आवश्यकता ही सीमित कर ली । ढाई कट्टे को बढ़ाकर सैंकड़ों बीघा खरीदने की उनकी चाह ही न थी । उन्होंने अपने समाज में एक आदर्श रखा कि व्यक्ति यदि अपनी इच्छा रूपी घोड़े पर लगाम लगा दे तो उसके पास जो भी होगा यथेष्ठ होगा । ढाई कट्टे के प्लाट में रहते उसमें फल-फूल, साग-सब्जी लगाते, शास्त्र अध्ययन करते रहते । दूर दूर से पंडित उनसे शास्त्रार्थ करने आते । तब राजा महाराजा भी अपने राज्य में पंडितों का आदर करना जानते थे । कई बार महाराजा की तरफ से राज-दरबार में रहने के लिए मिश्र जी से आग्रह था । उपहार स्वरूप ही धनराशि भेजी जाती थी । लेकिन जाको कुछ नहीं चाहिए सो ही शाहन शाह ।" उन्हें तो कुछ चाहिए ही न था ।

इतना ही नहीं दान दक्षिणा भी देते रहते थे । निश्चय ही संतोष रूपी जल से सिंचित ढाई कट्टे में उत्पन्न कन्द मूल फल बड़ा ही स्वादिष्ट रहा होगा । विद्वता, त्याग, तपस्या एवं संतोष वह एक ही मनुष्य में स्थापित हो उनके व्यक्तित्व में चार चांद लगा गया ।

उनका कहना था ढाई कट्टे जमीन एक व्यक्ति के लिए कम नही यदि वह उसकी उर्वराशक्ति को पहचाने । साथ ही अपनी खाद्य पद्धति पर भी नियंत्रण रखें ।

आत्मनिर्भरता ने जहां एक ओर उन्हें भाग्यवादी होने से वंचित किया था वहीं अपनी परिस्थिति के लिए दूसरे व्यक्ति अथवा समाज को दोषी ठहराने जैसे जघन्य पाप से भी ।

अयाची मिश्र का जीवन शारीरिक एवं मानसिक कार्य का संगम स्थल था । ढाई कट्टे में मजदूर लगाकर खेती कराने का सवाल ही नहीं उठता था । मिश्र जी को स्वयं खेत पर काम करना पड़ता । शारीरिक श्रम के बाद शास्त्राध्यन एवं चिन्तन की शक्ति भी बढ़ती जाती ।

सादा जीवन और उच्च विचार ही उनके जीवन का लक्ष्य था ।

आज मिथिला के ही गांव में जन्में किसान, पंडित, कर्मचारी अयाची मिश्र के जीवन को भूल गए ।

छोटे बड़े किसान भी अधिकतर उपयोग की वस्तुएं बाजार से खरीदने लगे हैं । तभी तो गांव अथवा शहर की छोटी बड़ी दुकानों में भीड़ जमी रहती है । आवश्यकता है अपनी खान-पान की आदत में सुधार की । अपनी फुलवाड़ी में उपजे फलफूल में वह स्वाद नहीं मिलता जो बाहर से आए महंगे फल में । आदर्श ही बदल गया है । कम से कम हमारे देश के किसान तो आत्मनिर्भर बन सकते ह । स्वावलंबन जीवन का उद्देश्य बन जाए फिर आप से आप आवश्यकता भी सीमित होती जाएगी । ☐

आंगन के दीप

बनवारी लाल ऊमर वैश्य

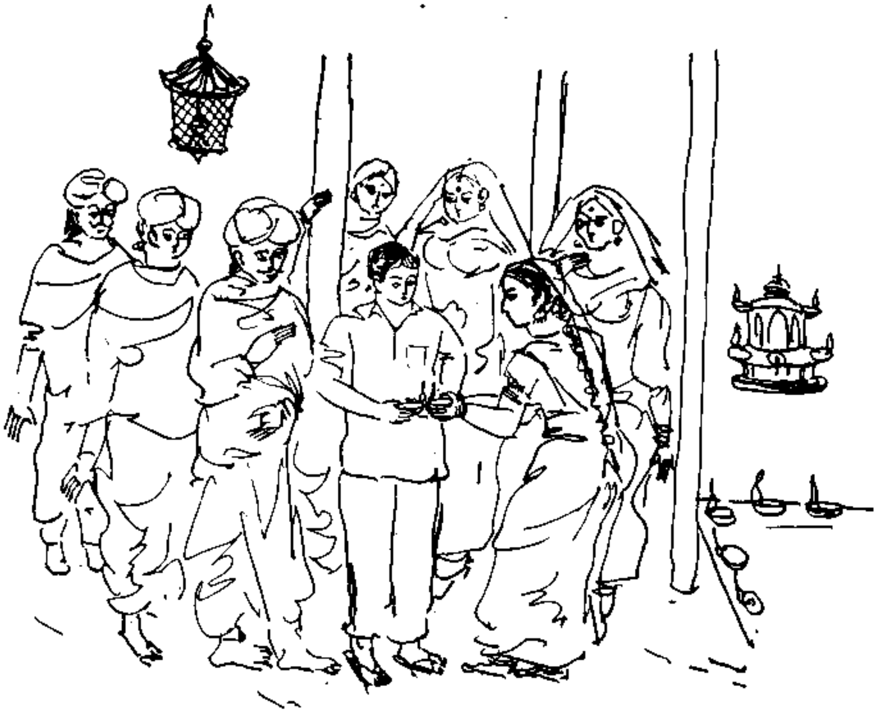

अरविन्द नौकरी की खोज में कई शहरों का चक्कर लगा चुका था। उसे कटु अनुभव हुआ कि ईश्वर भले मिल जाए पर नौकरी पाना कठिन है। मन उदास सा रहता था। अकेलापन जीवन और नदी में डगमगाती नाव सा मन न जाने क्यों रह-रह कर निराशामय भविष्य के ताने बुन रहे थे। एक समाचार पत्र कार्यालय में एक जगह खाली थी जिसके लिए एक हजार प्रार्थना पत्र पड़े थे। देश में इतनी बेरोजगारी जिसकी कोई सीमा नहीं। जीविका के बिना जीवन कैसे चलेगा। यह सोचकर अरविन्द कांप उठता था। आंखें सजल उठती थीं। रह-रह कर उसे शहर डाइन की तरह लगने लगा। वह शहर छोड़ कर गांव की ओर भाग चला।

अपरिचित गांव, लहलहाते खेत, कलकल गाती नदियां, गुजरियों का नृत्य और खेत-खलियान के बीच अपने को पाकर अरविन्द कुछ हर्षित हुआ किन्तु किसी भी ग्रामीण से वह परिचित न था। वह खिन्न मन एक नाले के पास बैठा था। गांव की किशोरियां नाले पर जल भरने आई थीं। किशोरियों की अल्हड़ हंसी और उनकी आपस की नोंक-झोंक भी अरविन्द के मन को बांध न सकी। एक नए आदमी को देखकर गांव के चौधरी काका ने अरविन्द को अपने पास बुलाया और बड़े प्यार से पूछा :—

बबुआ, तोहार घर दुआर कहवा हौवे।

मैं शहर से आया हूं। नौकरी नहीं मिली। इसलिए गांव की ओर आया हूं।

बबुआ तू कितना पढ़ा हये।

मैं बी.ए. हूं।

बस-बस, इतना से हम किसानन का काम सध जाई। अच्छा, बबुआ तू दालान में चला आव।

अरविन्द चौधरी काका के दालान में बैठ गया। थोडी देर बाद चौधरी की पत्नी पारो आई। अरविन्द ने उसे पांवलागन कहा। पारो आशिष बोली। गर्म दूध पीकर अरविन्द आराम करने लगा। पूस का महीना था। ठंडक थी।

बरगद की छांव में गांव की पंचायत बैठी जिसमें निर्णय हुआ कि एक बेरोजगार युवक को काम दिया जाए। उस पंचायत में चौधरी काका अगुआ थे। गांव के सभी किसान पढ़े-लिखे नहीं थे। उनके मन में पढ़ने-लिखने का चाव पैदा हो गया था। बस पूछना ही क्या था। चौधरी की दालान में रात्रि पाठशाला खुल गई। अरविन्द ग्रामीणों को पढ़ाने लगा। उसका मन नाच उठा। जीवन में नई आशा जागी।

शहर अरविन्द को जीविका न दे सका था। पर गांव ने अरविन्द को जीवन दिया। गांव धरती का स्वर्ग है। जहां कल्प वृक्ष उगते हैं जिसकी छाया में आदमी को अपनी इच्छा के अनुकूल वस्तुएं मिल जाती हैं। यदि गांव न होता तो देश न होता। यदि किसान न होते तो देश न होता। यदि किसान न होते तो जहांन न होते। गांव प्रकृति जिसकी दासी है। प्रातः सूरज और रात में चन्दा जहां अपनी निधियां लुटाते हैं। धरती के देवता खेतों में आकर

उत्पादन का कार्य करते हैं । यदि धरती पर कहीं स्वर्ग है तो गांव है ।

प्रौढ़ शिक्षा के कारण गांव में एक नई जागृति आ गई थी । स्त्रियां भी पढ़ने-लिखने लगी थीं । किसान अब स्वयं बैंक और डाकघर में लिख पढ़कर खाते खोल लेते थे । खेती के विषय में नई-नई बातें भी जानने लगे थे । योजना के द्वारा गांवों में हो रहे विकास के विषय में किसान भाई चर्चा करने लगे थे । धीरे-धीरे अरविन्द ग्रामीणों की आंखों का तारा हो गया । गांव का दुलारा बन गया ।

ग्रामीण योजना और सामुदायिक विकास के अन्तर्गत गांवों में ग्राम सेविका काम कर रही थीं जिनके कारण नारियों के स्वास्थ्य शिक्षा, शिशुपालन, शिल्प आदि के सम्बन्ध में जागरूकता आ गई थी । लक्ष्मी एक ऐसी ग्राम सेविका थी जिसने ग्रामीण नारियों का मन मोह लिया था । गांव में आते ही उसने नारियों को सभी प्रकार से योग्य बनाया । वह बड़ी हंसमुख और भावुक थी ।

गांव में रहते अरविन्द को तीन वर्ष हो गए थे । गांव के लोग उन्हें ओझल नहीं होने देते थे । अरविन्द गांव का बेटा बन चुका था । वह गांव की सेवा करना ही अपने जीवन का लक्ष्य समझता था ।

इस बार फसल अच्छी हुई थी । दीपावली आ गई थी । पंचायत घर के आंगन में धरती पर लीप-पोत कर भारत माता का चित्र बनाया गया था । दीपावली के दिन एक सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया था ।

"भारतमाता गांवों में बसती है । हम ग्रामीण भाई उसी के लाल हैं । उसी की गोद में जन्म लेते हैं और खाते-पीते हैं । यह गांव भारतमाता का मन्दिर है । हम सभी किसान इसके पुजारी हैं ।"

लक्ष्मी अरविन्द के भाषण को बड़े चाव से सुन रही थी । वह शहर की थी । दहेज के कारण उसका विवाह नहीं हो सका था । अन्त में वह ग्रामसेविका के पद पर कार्य करने लगी थी ।

अरविन्द और लक्ष्मी की जोड़ी को देखकर पारो चौधरी काका से कहा करती थीं— यह जोड़ी सीता और राम की जोड़ी है । गांव की स्त्रियों को भी यह जोड़ी बड़ी पसन्द थी ।

दीपावली के दिन गांव में बड़ी चहल-पहल थी । इस बार चौधरी काका भारत माता की पूजा के लिए नियुक्त किए गए थे । रात के समय पंचायत घर जगमगा उठा था । चौधरी काका ने कहा——अरविन्द, एक दीपक जलाओ । अरविन्द ने आंगन में एक दीप जलाया । इतने में पारो दौड़ती हुई आई और बोली——लक्ष्मी बिटिया, तुम भी एक दीपक जलाओ । लक्ष्मी ने भी एक दीपक जलाया ।

गांव की स्त्रियां भारतगीत गा रही थीं । आंगन में दो दीप जल रहे थे । एक दीप अरविन्द और दूसरा दीप लक्ष्मी का था ।

चौधरी काका ने कहा——भारतमाता के इस आंगन में दो दीप सदा जलते रहें ।

अरविन्द और लक्ष्मी विवाहसूत्र में बंधकर भी गांव में भारतमाता की सेवा में जुटे रहे । ☐

बनवारीलाल ऊमर वैश्य
डंकीनगंज, मीरजापुर (उ०प्र०)

जवानी की हुंकार

खेमसिंह नागर

नगला पदम,
जि० अलीगढ़ (उ० प्र०)

जो इंसां सर फरोशी के लिए तैयार होते हैं,
नहीं झुकता है सर जिनका वही सरदार होते हैं ।
कलम भी कैद होने पर पड़े कानून के ताले,
सितमगर ने न जाने कितने जलियां वाग रच डाले ।
जवानों की खुली आंखें जो ली गैरत ने अंगड़ाई,
तो देखा मौत उनके सामने आने से कतराई ।
शहादत का नारा जल्लाद ने चढ़ता हुआ देखा,
लबों पर मुस्कराहट थी वजन बढ़ता हुआ देखा ।
जवानी ने हुंकारा देख लबरेज पैमाना,
मैं जाकर फिर न लौटूंगी पड़ेगा पीछे पछताना ।
जवानी पर हवाओं को भी कसकर बांध लेती है,
पहाड़ों को भी कनअंगुली पर सीधा साध लेती है ।
जो फांसी घर को खेल का आनन्द समझे हैं,
जो इस भूगोल को भी गेंद के मानिन्द समझे हैं ।
वे ही इन्सानियत के हाथ की तलवार होते हैं,
नहीं झुकता है सर जिनका वही सरदार होते हैं ।

साहित्य समीक्षा

भारत में अर्थशास्त्र सम्बन्धी विचारों का विकास : लेखक : पी० के० गोपालकृष्ण, प्रकाशक : पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली—110055, पृष्ठ संख्या : 182, मूल्य : 12.50 रुपये ।

इस पुस्तिका में सन् 1880 से 1950 तक के भारतीय अर्थतन्त्र के विचारों को प्रस्तुत किया गया है । दादा भाई नौरोजी, रानाडे, गोखले, रमेश चन्द्र दत्त आदि के सामाजिक–आर्थिक विचारों का संकलन करते हुए लेखक ने उन पर विवेचना की है । लेखक के अनुसार, उन सब के विचार एक समान, स्वीकृत और व्यापक दर्शन से उद्भूत थे और उनका केन्द्र बिन्दु राष्ट्रीयता था । उनका विचार था कि उत्पादन को बढ़ाया जाए। उनका यह भी विचार था कि सामाजिक घटनाओं को इतिहास के संदर्भ में सामाजिक नियमों के माध्यम से ही समझा जा सकता है। गांधीवाद किसानों, दस्तकारों, तथा व्यक्ति समूहों का दर्शन है । उसमें एक ऐसे युग का स्वप्न निहित है जो शताब्दियों पहले ही समाप्त हो चुका है । औद्योगिक क्रांतियुक्त शक्तियों से सम्बन्ध उसमें कहीं प्रतीत नहीं होता। गांधी जी का व्यक्तित्व अनोखा था, वे एक दार्शनिक, राजनीतिक, और क्रांतिकारी थे । पुस्तक ग्राह्य और रोचक है। पाठकगण लेखक के विचारों से सहमत हों या न हों किन्तु उसके विचारों को सोचने योग्य और वजनी जरूर समझेंगे। प्रस्तुत सामग्री को देखते हुए मूल्य कम है । कागज, छपाई, गेट-अप आदि ठीक-ठाक है ।

डा० तारा चरण रस्तोगी

सन्तों की सीख: सं०: यशपाल जैन, प्रकाशक: सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 37, मूल्य : 4 रुपये ।

संसार के सभी धर्मों में समय-समय पर महा पुरुष और संत जन्म लेते रहे हैं। भाषा और देशों के अलग होते हुए भी सबके विचारों में समानता रही है । ईश्वर क्या है, सत्य क्या है, धर्म क्या है—इन सभी प्रश्नों पर संसार के सभी संतों का एक सा ही स्वर रहा है । साधारण पाठकों को संत पुरुषों की बातों का ज्ञान कराना ही सुबोध साहित्य का प्रमुख उद्देश्य हुआ करता है । यह पुस्तिका भी इसी दृष्टिकोण से लिखी गई है । इसमें विभिन्न धर्मों के 17 संतों और विचारकों के लेख संकलित हैं । एक ओर वैदिक साहित्य की शिक्षाप्रद बातों पर विचार किया गया है तो दूसरी ओर वेदों को न मानने वाले महावीर और गौतम बुद्ध के उपदेशों को भी दिया गया है। ईसा मसीह, मुहम्मद साहेब और नानकदेव ने ईश्वर, स्वर्ग आदि पर जो भी विचार प्रकट किए हैं उन्हें सुबोध भाषा में समझाया गया है ।

समाज में नीति आदि किस प्रकार से एक अच्छे समाज का निर्माण करते हैं, किस प्रकार से प्रेम, मनुष्य को मनुष्य के नजदीक लाता है —इस पर आधुनिक महात्माओं व विचारकों ने व्यक्तिगत रूप से जो कुछ अनुभव किया उसे सरलता पूर्वक समझाया गया है । गांधी, विनोबा, खलील जिब्रान, स्वामी मुक्तानंद परमहंस और रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस पर अनुभव के आधार पर प्रकाश डाला है । "प्रेम में भगवान" टालस्टाय की कहानी में ऐसी मार्मिकता है कि पाठक ईश्वर तत्व में विश्वास करने लगता है । यह कहानी हमें नास्तिकता से आस्तिकता की ओर ले जाती है । आज के युग में जब कि हम आपाधापी का जीवन जी रहे हैं, हमारे चारों ओर अशांति का साम्राज्य है । किंतु इस अशांति में भी यदि हम कभी अकेले में ईश्वर, धर्म, सत्य-असत्य, व्यक्ति-समाज पर विचार करें तो पाएंगे कि इस संसार में कोई न कोई शक्ति अवश्य है । वह शक्ति मानवता है। मानव में संवेदना जगाने में इस पुस्तिका के सभी लेख समर्थ हैं। दूर-दराज के ग्रामीण अंचलों में रह रहे आम पाठकों को ये लेख निश्चित रूप से अपना हृदय टटोलने में सहायक सिद्ध होंगे ।☐

शीतांशु भारद्वाज

भारतीय कला की भूमिका : लेखक : भगवत शरण उपाध्याय, प्रकाशक : पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 154, मूल्य 10 रुपये ।

भारतीय कला साहित्य के मर्मज्ञ डा० भगवत शरण उपाध्याय ने अपनी प्रस्तुत पुस्तक में भारतीय कला के विविध रूपों और रंगमंच का तथ्यपरक एवं वैज्ञानिक विवेचन किया है ।

लेखक के शब्दों में "कला प्रकृति को अपनी दृष्टि से देखती है। कलाकार दृश्य में पैठकर प्राय: उससे एकीभाव होकर उसे देखता है और सिरजता है। वह प्रकृति को तूलिका, छेनी अथवा लेखनी से संवार देता है।" लेखक का अपना कथन स्वयं लेखक ने सिद्ध किया है यानी भारतीय कला को अपनी लेखनी से संवारा है ।

भारतीय कला के विविध रूपों, स्थापत्य कला, मूर्तिकला, चित्रकला, एवं संगीत तथा रंगमंच का लेखक ने क्रमबद्ध चित्रण किया है । मौर्य युग (लगभग ई०पू० 322-ई०पू० 190) से जिस कला साधना का प्रारंभ हुआ वह अपने रूपों, प्रकारों और

अभिप्रायों में आने वाली अभारतीय जातियों के प्रभाव से अंतर ग्रहण करने के बाद भी अटूट चली आई। भारतीय कला का इतिहास पूर्व काल सिंधु घाटी की सभ्यता का है लगभग 2500 ई०पू० से 1500 ई०पू० तक।

भारतीय कला की प्रगति में सिंधु सभ्यता काल, मौर्य काल, यवन-शक-कुषाण काल और गुप्त काल अपने चार युग प्रस्तुत करते हैं जिनके कालक्रम से कला का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। पांचवें अध्याय रंगमंच में भारतीय रंगमंच का विशद विवेचन किया गया है। पुस्तक के अंत में 40 से भी अधिक चित्र दिए गए हैं।

लेखक ने उन दुराग्रह पूर्ण मतों का खंडन किया है जो यह मत व्यक्त करते हैं कि इस्लाम के भारत आने के बाद सिर्फ मूर्तियां व मंदिर खंडित किए गए। उन्होंने अपने कथन-उदाहरण से स्पष्ट किया है कि मुस्लिम वास्तु का सर्वाधिक भव्य, शालीन और अनुपम कलारूप भारत में मौजूद है।

यह पुस्तक कला साहित्य के विद्वानों, पाठकों और जिज्ञासुओं के लिए एक उपयोगी संदर्भ ग्रंथ है। ☐

देवेन्द्र उपाध्याय

'हंसी की परतें : लेखक : अनादि मिश्र, प्रकाशक : अपर्णा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 240, मूल्य : 32 रुपये।

'हंसी की परतें' पिछले दो वर्षों के दौरान प्रकाशित अनादि मिश्र की रचनाओं का दूसरा संग्रह है। इससे पहले, पिछले वर्ष जन्माष्टमी पर उनका खंड काव्य 'प्रश्नों का सूर्योदय' प्रकाशित हुआ था, जिसका अच्छा स्वागत हुआ। वर्तमान संग्रह में कहानियां, हास्य व्यंग रचनाएं, लघु कथाएं और दो लघु उपन्यासिकाएं हैं।

पुस्तक का नाम 'हंसी की परतें' संग्रह में प्रकाशित इसी नाम की एक कहानी पर रखा गया है। हंसी की परतें, तकावी और सुदामा कहानियां अपनी संवेदनशीलता के कारण पाठक के मन को छू लेती हैं और अपनी अमिट छाप छोड़ जाती हैं।

पुस्तक का पूरा नाम वर्जित रचनाएं—हंसी की परतें हैं। वर्जित रचनाएं शब्द का प्रयोग शायद लेखक ने अस्वीकृत रचनाओं के पर्याय के रूप में किया है क्योंकि पुस्तक की अधिकांश रचनायें अनेक प्रकाशन धामों की यात्रा करने के बाद लेखक के पास लौट आई थीं। अनादि की पहली रचना 1966 में प्रकाशित हुई। प्रबुद्ध वर्ग में उस की चर्चा भी हुई फिर कहीं कुछ गड़बड़ा गया। कोई अन्य लेखक इस पर निराश होकर बैठ जाता लेकिन अनादि तो कुछ दूसरी ही धातु के बने हैं।

उन्होंने ईमानदार, शोषित और उपेक्षित लोगों की भावनाओं को वाणी देने की कलम पाई है। उनका प्रेरणा स्रोत आम आदमी और उसके कष्ट रहे हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में अपेक्षित विषयों को छुआ है। प्रश्नों के सूर्योदय में उनका ध्यान कृष्ण की उपेक्षिता माता देवकी और हंसी की परतों में सुदामा की ओर गया है।

अनादि मूल रूप से कवि हैं। उनका मन कुसुमों से भी कोमल है लेकिन अन्याय और अत्याचार का विरोध करते समय वे वज्र से भी कठोर हो जाते हैं। अनादि का गद्य भी काव्य है क्योंकि उनकी रचनाओं में दूसरों के कष्ट और पीड़ा के लिए एक बेचैनी, छटपटाहट और आक्रोश है। उनके व्यंग पैने, अर्थपूर्ण और चोट करने वाले हैं लेकिन उनमें दुर्भावना का अंश मात्र नहीं है। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे स्वयं पर हंस सकते हैं और 'स्थिति' पर मीठी चुटकी ले सकते हैं। 'चिन्ता' 'पाकेट बुक्स' और 'गढ़' के द्वारा उन्होंने हिन्दी व्यंग की धार को तेज करने का प्रयत्न किया है। ☐

नवीन चन्द्र पन्त

हिन्दी कहानी---फिलहाल : लेखक : डा० चन्द्रभान रावत और डा० राम कुमार खण्डेलवाल, प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 138, मूल्य : 18.00 रुपये।

लेखक बन्धुओं ने मूल रूप से यह पुस्तक कहानी पर शोध करने वाले छात्रों के लिए लिखी है। लेकिन जन-साधारण भी इससे पूरा-पूरा लाभ उठा सकता है। हमारी युवा पीढ़ी के नाम पर वासना का नग्न नृत्य, हत्या, बलात्कार और न जाने क्या-क्या हो रहा है। यदि थोड़े समय के लिए सांस्कृतिक विघटन आ भी गया है तो इसका तात्पर्य यह नहीं कि हम अपनी रिक्तता को कूड़े-कचरे से भर लें। जो पारिवारिक सम्बन्ध घर के भावुक वातावरण के आधार थे, अब टूट रहे हैं। मां-बाप और संतति तथा पति और पत्नी के सम्बन्ध घर के मुख्य स्तम्भ थे। लेकिन अब? इसी प्रश्न चिन्ह पर आज का कहानीकार घर और घरेलू सम्बन्धों की टूटती कड़ियों को देखकर आक्रांत है।

"एक लम्बे समय तक जो स्त्री मेरे लिए केवल मां थी अब कभी-कभी ही मां लगती है या मां का भ्रम।" (लेखक-विजय चौहान-'मुक्ति' में)

लेखकों ने उपर्युक्त पक्तियों में यह स्पष्ट करने की कोशिश की है कि मां के साथ सन्तान के लगाव की भावुकता अन्य सम्बन्धों (पति-पत्नी, पिता-पुत्र, बहन-भाई) की अपेक्षा कुछ देर से टूटी है किन्तु टूट वह भी गई है। युग-युग से चले आ रहे और मनुष्य को जिन्दा रखने में सहायक मानवीय सम्बन्धों का टूटना आज की दुनिया की एक भयंकर सचाई है। आज का मानव केवल अपने में ही आत्मकेन्द्रित होता चला जा रहा है।

सम्बन्धों के द्वन्द्व और विरोधाभास पर नई कहानी से लेकर आज तक नए-नए कोणों से लिखा जा रहा साहित्य वास्तव में समाज की आन्तरिक व्यथा को स्पष्ट करता आ रहा है।

विवाह के सम्बन्ध में एक जलता हुआ प्रश्न समकालीन कहानीकार को आहत कर रहा है-"शादी का मतलब यह क्यों है कि सांस लेने वाले दो प्राणी उम्र भर साथ-साथ रहें।" यह कल के पिछड़े युग की बात न होकर आज के सुसंस्कृत युग की बात है।

लेखक अपने उद्देश्य में पूर्ण रूप से सफल कहे जा सकते हैं। पुस्तक की छपाई, गेटअप सुरुचिपूर्ण है। ☐

सुरेन्द्र कुमार धवन

केन्द्र के समाचार

गहन कृषि योजना

देश में जनसंख्या में तेजी से हो रही वृद्धि के कारण कृषि योग्य भूमि पर अधिक दबाव पड़ रहा है । प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि 1960–61 में 0.41 हेक्टेयर थी, जो घटकर 1977–78 में 0.29 हेक्टेयर रह गई । औसत आकार की जोतों का आकार जो 1970–71 में 2.30 हेक्टेयर था, घटकर 1976-77 में 2 हेक्टेयर हो गया। सरकार खाद्यानों तथा नकदी की फसलों का उत्पादन बढ़ाने हेतु विभिन्न केन्द्रीय तथा केन्द्र द्वारा प्रायोजित गहन कृषि योजनाओं को कार्य रूप दे रही है । ये योजनाएं हैं : अधिक उपज देने वाली किस्मों का कार्यक्रम; चावल के लिए मिनीकिट-कम्यूनिटी पौधशाला कार्यक्रम; गेहूं, मक्का तथा कदन्न का मिनीकिट कार्यक्रम; दलहन के गहन विकास की योजनाएं; गहन तिलहन विकास कार्यक्रम; गहन कपास जिला कार्यक्रम तथा गहन जूट जिला कार्यक्रम ।

ग्रामीण क्षेत्रों का विकास

पिछले कुछ वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों में विकास के कार्यक्रमों का विस्तार करने में अत्यधिक महत्व दिया गया है ताकि ग्रामीण श्रमिकों के सामाजिक व आर्थिक स्तर को उठाया जा सके । छठी योजना में अधिकांश साधनों को ग्रामीण क्षेत्रों की ओर मोड़ने और गरीबी और बेरोजगारी को दूर करने की व्यवस्था की गई है जो प्लान कार्यक्रमों के मुख्य स्तंभ हैं । ग्रामीण श्रमिक, अगर उनकी शहरी क्षेत्रों के श्रमिकों से तुलना की जाए, कुछ हद तक असंगठित हैं, कुछ मामलों में वे प्रवासी हैं तथा वे विभिन्न व्यावसायिक कार्यकलापों में फैले हुए हैं। कृषि श्रमिकों और भवन तथा निर्माण कार्य में लगे श्रमिकों के लिए केन्द्रीय कानून पर भी सरकार विचार कर रही है । बीड़ी निर्माण में लगे और चूना पत्थर तथा डोलोमाइट खानों में काम करने वाले ग्रामीण श्रमिकों के लिए सावधिक कल्याण निधियां गठित की गई हैं । इन निधियों में चिकित्सा देखरेख, आवास, मनोरंजन सुविधाओं, श्रमिकों को पर्याप्त जल की आपूर्ति और उनके बच्चों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की गई है । अभ्रक खानों, लोहा अयस्क और मैंगनीज खानों में काम करने वाले ग्रामीण श्रमिक भी इन सुविधाओं को प्राप्त करते हैं । बुनकरों और मत्स्य और चमड़ा उद्योगों में नियोजित श्रमिकों को इन सुविधाओं के कार्य क्षेत्र का विस्तार करने की व्यावहारिकता पर विचार किया जा रहा है। 20 सूत्री आर्थिक कार्यक्रम, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, समाकलित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, स्व-नियोजन कार्यक्रम के लिए ग्रामीण युवकों को प्रशिक्षण (टी० आर० वाई० एस० ई० एम०) राष्ट्रीय ग्रामीण नियोजन कार्यक्रम, सम्पूर्ण ग्राम विकास योजना, आदिवासी और पहाड़ी क्षेत्र परियोजना, अनुसूचित जातियों के लिए विशेष कार्यक्रम जैसे वर्तमान कार्यक्रम केवल कार्यक्रमों की विविधता के सूचक हैं जिन्हें ग्रामीण श्रमिकों के लाभ के लिए कार्यान्वित किया जा रहा है । ग्रामीणों को राहत देने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं ।

दूध का उत्पादन

भारत 1984–85 तक 380 लाख टन दूध का उत्पादन करेगा । इससे प्रतिदिन प्रति व्यक्ति के लिए दूध की उपलब्धता 120 ग्राम से बढ़कर 146 ग्राम हो जाएगी । इस उत्पादन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 1979–80 में 46 लाख पशुओं की तुलना में 1984–85 तक 180 लाख पशुओं का कृत्रिम गर्भाधान किया जाएगा और 1984–85 तक संकर गायों की संख्या 30 लाख से बढ़ाकर 80 लाख की जाएगी । 1956 में देश में दूध का कुल उत्पादन 176 लाख टन था और 1979–80 में यह उत्पादन 300 लाख टन हो गया । पशुओं के विकास के लिए कई कदम उठाए गए हैं जिनमें प्रजनन, बेहतर चारा, प्रबंध कार्य, उनके लिए कुशल स्वास्थ्य सेवाएं और दूध से बनी वस्तुओं के लिए लाभकर बाजार की सुविधाएं उपलब्ध कराना है। राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान करनाल ने वनस्पति और पशुओं के बसा के समिश्रण से घी तैयार करने में उल्लेखनीय कार्य किया है। क्रोमेट्रोग्राफिक तकनीकों के प्रयोग से इस पद्धति का विकास किया गया है । विभिन्न नए जीवाणु संवर्धनों के विकास करने पर जोर दिया गया है ताकि दही जैसे खमीर वाले दूध को स्वादिष्ट बनाया और उसमें लवणों का विकास किया जा सके । 70 के दशक में दूध को इकटठा करने में तीन गुना वृद्धि हुई है । 1970 में प्रतिदिन 20 लाख लीटर दूध इकट्ठा किया जाता था जबकि आज 69 लाख लीटर दूध इकट्ठा किया जाता है । 1985 तक प्रतिदिन 210 लाख लीटर दूध इकट्ठा करके इसमें तीन गुनी वृद्धि हो जाने की आशा है ।

कृषि पंडितों व उद्यान पंडितों को पुरस्कार

सन् 1978–79 की फसल प्रतियोगिता के कृषि पंडितों तथा 1979–80 के उद्यान पंडितों को पुरस्कार वितरित किए गए । उनमें से नौ किसानों को धान, गेहूं तथा चना में सर्वाधिक उत्पादन के लिए सम्मानित किया गया । सेवा की चार यूनिटों ने बढ़िया फसल उगाने में प्रशंसनीय कार्य किया था । अखिल भारतीय प्रतियोगिता में हर फसल के लिए तीन नकद

पुरस्कार दिए जाते हैं। प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान पाने वाले विजेताओं को क्रमश: 5,000 रुपये, 3,000 रु० और 2,000 रु० दिए जाते हैं। प्रत्येक फसल के प्रथम पुरस्कार विजेता को "कृषि पंडित" प्रमाण-पत्र भी प्रदान किया जाता है। पिछले वर्षों की भांति ही 1978–79 में भी विस्तार निदेशालय, कृषि मंत्रालय ने धान, चना तथा गेहूं की अखिल भारतीय प्रतियोगिताएं आयोजित की थीं।

उद्यान पंडित पुरस्कार देश के विशिष्ट फल उगाने वाले व्यक्तियों को दिया जाता है। पुरस्कार अखिल भारतीय स्तर पर आम, केला, मौसमी, अंगूर, संतरा, बेर, नींबू, चीकू, तथा अमरूद के बागों की प्रतियोगिता के आधार पर दिए जाते हैं। प्रथम पुरस्कार विजेता उद्यान पंडित को एक प्रमाण-पत्र, एक कांस्य पदक तथा 5,000 रूपये दिए जाते हैं। द्वितीय पुरस्कार विजेता को योग्यता का प्रमाण-पत्र तथा 2,000 रुपये दिए जाते हैं। श्री हीराभाई रामजीभाई पटेल, ग्राम शदहावादार, भावनगर (गुजरात) का बगीचा देश का सर्वोत्तम घोषित किया गया। इसके लिए उन्हें "उद्यान पंडित" की उपाधि दी गई। श्री के० एस० कृष्णामूर्ति, मालिक लाईम लाइट फार्म, रामयाणपट्टी, तिरेनेलवेल्ली, जिला तमिलनाडु, ने अखिल भारतीय उद्यान पंडित प्रतियोगिता 1979–80 का द्वितीय पुरस्कार प्राप्त किया।

वायु सेवा द्वारा विकलांग व्यक्तियों को नौकरी

अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष, 1981 के दौरान विकलांग व्यक्तियों को सहायता पहुंचाने के उद्देश्य से वायु सेना ने अपनी विभिन्न इकाइयों में नौकरी देने के लिए 41 अपंग व्यक्तियों का चयन किया है। इनमें 10 दृष्टिहीन, 16 शारीरिक रूप से विकलांग तथा 15 बधिर हैं।

वायु सेना द्वारा यह नियोजन कार्यक्रम प्रधानमंत्री द्वारा जारी निर्देश के तहत शुरू किया गया है।

पांच दृष्टिहीन व्यक्तियों को नौकरी में रख लिया गया है। ये लोग वायु सेना की कुछ इकाइयों के भोजनालयों तथा कार्यालयों में काम करेंगे। आठ शारीरिक रूप से विकलांग तथा आठ बधिर व्यक्तियों को लिपिक और स्टोर-कीपर के रूप में नियुक्त किया गया है। वायु सेना के अधिकारियों ने यथासंभव अधिक से अधिक विकलांग व्यक्तियों को नियोजन के अवसर प्रदान करने के लिए विशेष अभियान चलाया है। ☐

बच्चों के लिए सर्वोत्तम उपहार

सुन्दर वस्तुएं—हमारी विरासत की एक झलक
ले० विद्या दहीजया
भारतीय कला विरासत के विषय पर बच्चों के लिए लिखी गई एक विशेष पुस्तक। पृष्ठ-62 . 12.50

जंगल के नागरिक—ले० राजेन्द्र अवस्थी
वन्य जीव जन्तुओं पर 24 कहानियों का एक रोचक संग्रह। पृष्ठ-70 . . . 6.00

गीत भारती—ले० सोहनलाल द्विवेदी
द्विवेदी जी की यह अनुपम कृति बाल पाठकों को प्रेरित करेगी, गुदगुदाएगी तथा आगे बढ़ने का संबल बनेगी। पृष्ठ-20 . . . . 6.00

मोर—हमारा राष्ट्रीय पक्षी—ले० अजित कुमार मुखर्जी
इस पुस्तक में लेखक ने भारत के पक्षियों में सबसे भव्य, आकर्षक और रंग-बिरंगे राष्ट्रीय पक्षी मोर की जानकारी रोचक भाषा में प्रदान की है। पृष्ठ-40 . . . . . 6.00

कबूतर—ले० रामेश बेदी
इस पुस्तक में लेखक ने इस पक्षी के गुणों तथा स्वभाव के बारे में बच्चों के लिए रोचक जानकारी प्रदान की है। पृष्ठ-64 . . . . 5.00

सरल पंचतंत्र—खण्ड-I—ले० विष्णु प्रभाकर
पशु-पक्षियों के विषय में रोचक कहानियां सरल भाषा में प्रस्तुत की गई हैं। पृष्ठ-82 . 5.00

जीव घड़ियां—ले० मनोरमा जफा
पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों की जानकारी पर एक विशेष पुस्तक 5.00

कहानी आजकल सुप्रसिद्ध हिन्दी मासिक 'आजकल' में समय-समय पर प्रकाशित कहानियों का लोकप्रिय संग्रह । पृष्ठ-342	12.00
लोरिक चन्दा—ले० चन्द्रशेखर मिश्र लोकप्रिय लोक काव्य की मूल कथा बच्चों के लिए । पृष्ठ-31	4.50
भारत की वीर गाथाएं—ले० शिवकुमार गोयल महाभारत से लेकर 1922 तक के ऐसे अनेक वीर चरित्रों का उल्लेख है जो अन्याय के विरुद्ध अपनी जान की बाजी लगाने में तनिक भी न हिचके । पृष्ठ-66	7.00
तिरुक्कुरल—ले० डा० रवीन्द्रकुमार सेठ प्राचीन तमिल साहित्य के गौरव काव्य तिरुक्कुरल पर विवरणात्मक पुस्तक । पृष्ठ-50	10.00
ज्यादा का चक्कर—ले० आशापूर्णा देवी बंगला साहित्य में प्रकाशित एक कहानी संग्रह । पृष्ठ-90	8.00
आंवला दान—ले० अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकर पुस्तक में 20 कहानियां संग्रहीत हैं, जिनकी भाषा सरल, सुगम और प्रायः बोली जाने वाली हिन्दी रखी गई है । पृष्ठ-82	8.00
अनजाने में हुए आविष्कार—ले० शुकदेव प्रसाद यह बच्चों के लिए एक कथा संग्रह है जो रोचक, मनोरंजक व ज्ञानवर्धक साहित्य से परिपूर्ण है । पृष्ठ-48	7.50
महाराणा प्रताप—ले० रघुबीर सिंह इस ग्रंथ में महाराणा प्रताप के जीवन-वृत्त को यथासंभव प्रामाणिक तथा परिपूर्ण करने का भरसक प्रयास किया गया है । पृष्ठ-86	8.00
ईसप की गीत कथाएं—भाग-2—ले० निरंकार देव सेवक इन कहानियों में पंचतंत्र और हितोपदेश की भांति पशु-पक्षियों की कथाओं द्वारा अच्छी शिक्षा दी गई है । पृष्ठ-132	12.00
चतुर्दशी चौदह भारतीय भाषाओं की कहानियों का संग्रह । पृष्ठ-360	14.00
किस्सा चार दरवेश—ले० अमीर खुसरो किस्सा चार दरवेश प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो की पुस्तक 'बागे-बहार' का अनुवाद है । पृष्ठ-37	6.25
ज्ञानी चूहा—ले० मन्मथनाथ गुप्त इस पुस्तक में बच्चों के लिए अतीव रोचक, मनोरंजक व ज्ञानवर्धक कहानियां दी गई हैं । पृष्ठ-48	6.00

डाक खर्च मुफ्त । 10 रु० से कम के आदेश पर पंजीकरण शुल्क अतिरिक्त भेजिए । पुस्तकें स्थानीय पुस्तक विक्रेताओं से लें या सम्पूर्ण साहित्य की जानकारी के लिए लिखें :—

व्यापार व्यवस्थापक,
प्रकाशन विभाग,
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार,
पटियाला हाउस, नई दिल्ली ।
सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली ।
8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता ।
कामर्सहाउस (दूसरी मंजिल), करीमभाई रोड, बैलर्ड पीयर, बम्बई ।
लोकल लाइब्रेरी आडिटोरियम, 736 अन्ना सलाइ, मद्रास-600002 ।
बिहार स्टेट को-आपरेटिव बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना ।
प्रैस रोड, त्रिवेन्द्रम ।
10-बी, स्टेशन रोड, लखनऊ ।

जितने से जीवन का काम चल सके उतने पर ही इन्सान का अधिकार होना चाहिए । जो इससे अधिक चाहता है वह चोर है और दण्ड पाने योग्य है ।

—श्रीमद्भागवत

RN 708/57
P & T Regd. No. D(DN)98
Licensed Under U(D)-55 to
Post without pre-payment at Civil Lines Post Office, Delh

विकलांग ग्रामीण बाला अपनी कृत्रिम टांग को सम्भालने की कोशिश करती हुई।

विकलांग बैसाखी के सहारे चलता हुआ।

मूक-बधिर बालाएं संकेत से हंसी-मजाक करती हुई।

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और